उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

मानविकी विद्याशाखा

भाषाविज्ञान एवं हिन्दी भाषा (भाग एक)

तृतीय सेमेस्टर 603

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एच.पी. शुक्ल
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो. सत्यकाम
हिन्दी विभाग
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो.आर.सी.शर्मा
हिन्दी विभाग
अलीगढ़ विश्वविद्यालय,अलीगढ़

डा. राजेन्द्र कैड़ा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डा. शशांक शुक्ला
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम समन्वयक, संयोजन एवं संपादन

डा. राजेन्द्र कैड़ा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डा. शशांक शुक्ला
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

भाषाविज्ञान एवं हिन्दी भाषा MAHL-**6**03

इकाई लेखक	**इकाई संख्या**
डा. शशांक शुक्ला असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल	1, 2, 3, 4
डॉ. दिलीप पाण्डेय हिंदी विभाग, रजा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर, उ.प्र.	5, 6, 7,

कापीराइट@उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

संस्करण: 2022
सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशकः उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी ,नैनीताल -263139
मुद्रक : प्रीमियर प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी ,नैनीताल -263139

ISBN - 978-93-84632-73-1

उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय,हल्द्वानी

तृतीय सेमेस्टर - 603

खण्ड 1 – हिन्दी भाषा एवं लिपि	**पृष्ठ संख्या**
इकाई 1 हिंदी भाषा का उद्भव एवं विकास	1-10
इकाई 2 हिंदी: उपभाषाएँ एवं बोलियाँ	11-19
इकाई 3 भारतीय संविधान एवं हिंदी	20-31
इकाई 4 देवनागरी लिपि: उद्भव एवं विकास	32-44
खण्ड 2 – हिन्दी भाषाविज्ञान	**पृष्ठ संख्या**
इकाई 5 ध्वनि विज्ञान-1 (स्वन विज्ञान)	45-64
इकाई 6 ध्वनि विज्ञान-2 (स्वनिम प्रक्रिया)	65-85
इकाई 7 रूप विज्ञान	86-101

इकाई 1 हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 पाठ का उद्देश्य
1.3 हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास
1.3.1 भाषा अर्थ एवं परिभाषा
1.3.2 हिन्दी भाषा-परिचय
1.3.3 हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास
1.4 हिन्दी भाषा और मानकीकरण का प्रश्न
1.5 हिन्दी और उर्दू का प्रश्न
1.6 सारांश
1.7 शब्दावली
1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

एम. ए. द्वितीय वर्ष के तृतीय प्रश्न पत्र की यह प्रथम इकाई है। यह खण्ड हिन्दी भाषा एवं लिपि से संबंधित है। हिन्दी भाषा का सम्बन्ध भारोपीय परिवार से हे। भारोपीय भाषा परिवार, संसार का सबसे बड़ा भाषा परिवार है। इसी भषा परिवार में संस्कृत, हिन्दी जैसी भाषाएँ आती है। हिन्दी भाषा की लम्बी सांस्कृतिक परम्परा रही है। संस्कृत जैसी समृद्ध भाषा के दाय को स्वीकार करके यह विकसित हुई है। शौरसेनी अपभ्रश से हिन्दी भाषा के विकास को स्थिर किया गया है। शौरसेनी अपभ्रंश का संबंध शूरसेन प्रदेश व उसके आस-पास के क्षेत्र से रहा है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से प्राकृत भाषा के क्रमशः कई भेद हो गये- शौरसेनी, पैशाची, महाराष्ट्री, अर्धमागधी एवं मागधी। हिन्दी व उसकी बोलियों का सम्बन्ध उपरोक्त अपभ्रंशों से ही हुआ है। हिन्दी भाषा केवल एक भाषा नहीं है, अपितु एक संस्कृति है। हिन्दी भाषा एक जातीय चेतना है। डॉ. रामविलास शर्मा हिन्दी को एक 'जाति' (विराट संस्कृति) के रूप में ही देखते हैं। कारण यह

कि यह अपने में मात्र एक भाषा नहीं है, अपितु कई बोलियों/भाषाओं की जातीय संस्कृति को समेटे एक विराट संस्कृति है।

हिन्दी भाषा का परिदृश्य इतना व्यापक है कि इसके कई स्थानीय रूप व शैलियाँ प्रचलित हो गई है। अखिल भारतीय संदर्भ के कारण इसके व्याकरणिक रूपों में भी किंम्बित परिवर्तन हो गये हैं। अतः इस संबंध में मानकीकरण का प्रश्न भी उठ खड़ा होता है। हिन्दी और उर्दू के संदर्भ का प्रश्न भी विवादित रहा हे। उर्दू, हिन्दी की एक शैली है या स्वतंत्र भाषा? इस प्रश्न को साहित्यिक, धार्मिक, राजनीतिक-साम्प्रदायिक कई दृष्टियों से देखा गया है। इस प्रश्न पर भी हम इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

1.2 पाठ का उद्देश्य

एम.ए.एच.एल -203 हिन्दी भाषा एवं लिपि नामक खण्ड की यह प्रथम इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- भाषा के अर्थ को समझ सकेंगे।
- हिन्दी भाषा के उद्भव एवं विकास की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
- हिन्दी भाषा की जनपदीय बोलियों से परिचित हो सकेंगे।
- हिन्दी और उर्दू के अंतर्सम्बन्ध को समझ सकेंगे।
- भाषा और मानकीकरण के प्रश्न को समझ सकेंगे।

1.3 हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास

हिन्दी भाषा के उद्भव एवं विकास की रूपरेखा की समझ के लिए भाषा की समझ होना अनिवार्य है। हिन्दी भाषा की सम्प्रेषणीयता और उसके सामाजिक सरोकार की समझ के लिए भी भाषा की समझ आवश्यक है।

1.3.1 भाषा: अर्थ एवं परिभाषा

भाषा क्या है? हम भाषा का व्यवहार क्यों करते हैं? यदि हमारे पास भाषा न होती तो हमारा जीवन कैसा होता? भाषा का मूल उद्देश्य क्या है? जेसे ढेरों प्रश्न गहरे विचार की माँग करते हैं। 'भाषा' धातु से उत्पन्न भाषा का शाब्दिक अर्थ है- बोलना। शायद यह व्याख्या तब प्रचलित हुई होगी जब मनुष्य केवल बोलता था, यानी उस समय तक लिपि का आविष्कार नहीं हुआ था। प्रश्न यह है कि बिना बोले क्या मनुष्य रह सकता है? वस्तुतः भाषा सामाजिकता का आधार है..... मनुष्य के समस्त चिंतन व उपलब्धियों का आधार हे। इसका अर्थ यह नहीं है कि पशु-

पक्षियों के पास कोई भाषा नहीं होती, उनके पास भी भाषा होती है किन्तु वे उस भाषा का लियान्तरण नहीं कर सके हैं। भौतिक आवश्यकताओं से ऊपर का चिंतन व विकास बिना भाषा के संभव ही नहीं हे। हम भाषा में सीचते हैं.....भाषा में ही चिंतन करते हैं यदि मनुष्य से उसकी भाषा छीन ली जाये तो वह पशु तुल्य हो जायेगा। आज अनके भाषाएँ संकट के मुहाने पर खड़ी है, दरअसल यह संकट सभ्यता व संस्कृति का भी है तो भाषा का मूल कार्य है सम्प्रेषण। जिस व्यक्ति के पास सम्प्रेषण के जितने कार हो व उतनी ही विधियाँ व पद्धतियाँ खोज लेता है। कथन के इतने प्रकार व ढंग मनुष्य के सम्प्रेषण के ही प्रकार है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया में कम-से-कम दो व्यक्तियों का होना आवश्यक है। यानी इस प्रक्रिया में एक वक्ता और एक श्रोता का होना आवश्यक हे। इस प्रक्रिया में एक तीसरा तत्व और होता है और वह है सम्प्रेषण का कथ्य। सम्प्रेषण के कथ्य का तात्पर्य वक्ता के संदेश से है। और इस सारी प्रक्रिया का अंतिम लक्ष्य एक खास प्रयोजन की प्राप्ति है। इन सारी प्रक्रिया को हम इस आरेख के माध्यम से समझने का प्रयास करें-

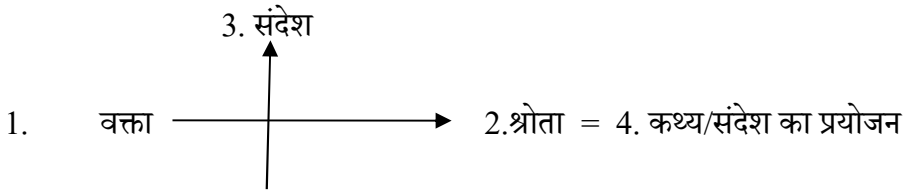

भाषा सम्प्रेषण की यह प्रक्रिया प्राथमिक और आधारभूत है। मनुष्य के भाषा सम्प्रेषण की विशेषता है कि यह ध्वनि एवं उच्चरित ध्वनियों की प्रतीक व्यवस्था से संचालित होती है। जब भाषा को परिभाषित करते हुए कहा गया है- ''भाषा उच्चरित ध्वनि प्रतीकों की यादृच्छिक श्रृंखला है'' स्पष्ट है कि मुख द्वारा उच्चरित ध्वनियों को ही भाषा के अंतर्गत समाविष्ट किया जाता है। सम्प्रेषण के और भी कई रूप हैं जैसे- आँख द्वारा, स्पर्श द्वारा, गंध द्वारा, इशारे द्वारा,..... इत्यादि....। हम सामान्य रूप से सारे माध्यमों का प्रयोग करते हैं लेकिन भाषा के मूल रूप में उच्चरित का ही प्रयोग करते हैं मनुष्य की भाषा प्रतीकबद्ध ढंग से संचालित होती है। हर शब्द अपने लिए एक प्रतीक रचते हैं, चुनते हैं। और वह प्रतीक एक दूसरे शब्द से भिन्न आर्थ लिये हुए होता है। भाषा के इस प्रतीकबद्ध व्यवस्था को हम एक आरेख के माध्यम से समझ सकते हैं-

प्रतीकों के निर्माण आधार (साभार इग्नू)

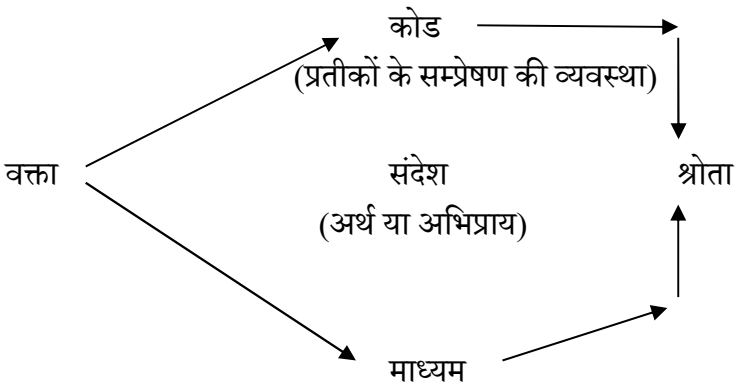

इस प्रक्रिया में सम्प्रेषण के लिए आवश्यक है: 1. वक्ता 2. श्रोता 3. माध्यम 4. कोड व्यवस्था - जिसके संदेश को श्रोताओं तक पहुँचाया जाता है। 4. प्रयोजन/

1.3.2 हिन्दी भाषा: परिचय

जब हम हिन्दी भाषा शब्द का व्यवहार करते हैं तब हमारे सामने तीन अर्थ तीन है। एक- ऐसी भाषा, जिसका उत्तर भारत के लोग सामान्य बोलचाल में इसका प्रयोग करते है। दो- मानक हिन्दी, जो साहित्य व संस्कृति का प्रतीक है। तीन-जो भारत की राजभाषा है और जिसका प्रयोग सरकारी काम-काज के लिए किया जाता है। यहाँ हम प्रमुख रूप से हिन्दी भाषा की बात कर रहे हैं। हिन्दी भाषा के विकास क्रम को 1000 ई. से मान गया है। हिमालय से विन्ध्याचल व राजस्थान से लेकर बंगाल तक इसका क्षेत्र माना गया है। 18 बोलियों के संयुक्त दाय को लेकर इस भाषा का गठन हुआ है। भाषा के रूप में इसका विस्तार पूर्व के प्रेदश (बंगार, उड़िया) तक हैं, जहाँ की हिन्दी ब्रजबुलि है, वहीं पश्चिम के प्रदेश गुजराती, राजस्थानी एवं इक्षिण-पश्चिमी भाषा मराठी तक इसका प्रसार है। इसी प्रकार उत्तरी क्षेत्र में हिमाचल प्रदेश व जम्मू तक तथा दक्षिण के प्रदेश में हैदराबाद (दकनी हिन्दी) तक इसका प्रसार है।

1.3.3 हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास

हिन्दी भाषा के विकास का सम्बन्ध अपभ्रंश से जुड़ा हुआ है। संस्कृत भाषा से कई प्राकृतों विकसित हुई और उन प्राकृतों से अपभ्रंश। इन अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का जन्म हुआ। डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा ने आधुनिक आर्य भाषाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है-

उत्तरी	-	सिंधी, लहंदा, पंजाबी
पश्चिमी	-	गुजराती
मध्यदेशी	-	राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी, पहाड़ी,

पूर्वी - ओड़िया, बंगला, असमिया
दक्षिणी - मराठी

जबकि डॉ0 ग्रियर्सन का वर्गीकरण इस प्रकार है -

(क) बाहरी उपशाखा
प्रथम - उत्तरी-पश्चिमी समुदाय
1. लहंदा अथवा पश्चिमी पंजाबी
2. सिन्धी
द्वितीय- दक्षिणी समुदाय
3. मराठी
तृतीय - पूर्वी समुदाय
4- ओड़िया
5- बिहारी
6- बांगला
7- असमिया

(ख) मध्य उपशाखा
चतुर्थ - बीच का समुदाय
8- पूर्वी हिन्दी

(ग) भीतरी उपशाखा
पंचम - केंद्रीय अथवा भीतरी समुदाय
9- पश्चिमी हिन्दी
10- पंजाबी
11- गुजराती
12- भीली
13- खानदेशी
14- राजस्थानी
पष्ठ - पहाड़ी समुदाय
15- पूर्वी पहाड़ी (नेपाली)
16- मध्य या केंद्रीय पहाड़ी
17- पश्चिमी पहाड़ी

स्थूल रूप में हम आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को 1000ई0 के आस-पास से मान सकते हैं। भारतीय भाषा के विकास क्रम को प्रमुखतः तीन चरणों में विभक्त किया गया है-

1. हिन्दी भाषा का आदिकाल (1000-1500 ई0 तक)
2. हिन्दी भाषा का मध्यकाल (1500 से 1800 ई0 तक)
3. हिन्दी भाषा का आधुनिक काल (1800 ई. के बाद से आज तक)

भारतीय आर्य भाषा: विकास क्रम

भारतीय आर्यभाषाओं के विकास क्रम को इस प्रकार समझा जा सकता है। भारतीय आर्यभाषा के विकास क्रम को तीन चरणापें में विभक्त किया गया है। भाषा विकास क्रम को आइए देखें-

1. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (1500 ई. पू. से 500 ई.पू.)
2. मध्यकानीन भारतीय आर्यभाषा (500 ई.पू. से 1000 ई. तक)
3. आधुनिक भारतीय आर्यभाषा (1000ई. से अब तक)

1- हिन्दी भाषा का आदिकाल

भाषा विकास क्रम के अध्ययन की प्रक्रिया में हमेन देखा कि 1000 ई. के आस-पास का समय भाषा की दृष्टि से निर्णायक बिन्दु हें इस बिन्दु पर अपभ्रंश को केंचुल उतारकर भाषा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में ढलना प्रारम्भ कर देती है। भाषा की दृष्टि से इस काल को 'संक्राति काल' कहा जा सकता है क्योंकि अपभ्रंश भाषा अपना स्वरूप परिवर्तित कर रही थी। सन् 1000 से 1200 ई0 तक का समय विशेष रूप से, इस संदर्भ में लक्षित किया जा सकता है। इस काल के अपभ्रंश को 'अवहट्ट' नाम दे दिया गया है। विद्यापति ने कीर्तिलता की भाषा को 'अवहट्ट' ही कहा है। कुछ लोगों ने इसे ही 'पुरानी हिन्दी' (चन्द्रधर शर्मा गुलेरी) कहा है। तात्पर्य यह कि हिन्दी भाषा अपने निर्माण की प्रक्रिया से गुजर रही थी। खड़ी बोली का आरम्भिक रूप अमीर खुसरो तथा बाद में कबीर के साहित्य में स्पष्टयता मिलने लगते हैं। जैन, बौद्ध, नाथ, लोक कवि आदि के माध्यम से हिन्दी भाषा के विविध रूप हमें देखने को मिलते हैं। राजस्थानी-खड़ी बोल- अपभ्रंश के मिश्रण से 'डिंगल शैली' का प्रचलन हुआ। इस संबंध में श्रीधर को 'रणमल छंद' व कल्लौल कवि की 'ढोला मारू रा दोहा' प्रतिनिधि रचनाएं हैं। रासो साहित्य के ऊपर डिंगल, शैली का प्रभाव देखा जा सकता हे। इसी प्रकार अपभ्रंश भाषा के ब्रजभाषा के मिश्रण से पिंगल' शैली का जन्म हुआ। इसी प्रकार खड़ी बोली और फारसी के प्रभाव से 'हिन्दवी' की शैली प्रचलित हुई। अमीर खुसरो इस शैली के प्रयोक्ता है।

2- हिन्दी भाषा का मध्यकाल

हिन्दी भाषा का मध्यकाल 1500 ई. से 1800 ई. तक है। इस समय तक खड़ी बोली भाषा के रूप में अस्तित्व ले चुकी थी, लेकिन अवधी एवं ब्रजभाषा ही साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध भाषाएं बन पाई थीं। यद्यपि मौखिक सम्प्रेषण -सामाजिक सम्प्रेषण की भाषा के रूप में खड़ी बोली लोक में बराबर चल रही थी। भाषा की दृष्टि से इसे हिन्दी भाषा का स्वर्णकाल कहा गया है। सूर, तुलसी, मीरा, रहीम, रसखान, केशव जैसे सैकडो़ कवियों ने इस काल के भाषा एवं साहित्य की वृद्धि की है।

हिन्दी भाषा की दृष्टि से दूसरा परिवर्तन यह हुआ कि फारसी शब्दों का बड़ी संख्या में समावेश हो गया। तुलसी, सूर जैस कवियों की भाषा पर भी इस प्रभाव को देखा जा सकता है।

3- हिन्दी भाषा का आधुनिककाल

हिन्दी भाषा के आधुनिक काल में 1800 ई0 के बाद के समय को रखा गया है। इस समय तक गद्य के रूप में खड़ी बोली की रचनाएँ प्रकाश में आनी शुरू हो जाती है। अकबर के दरबारी कवि गंग की 'चन्द्र छन्द बरनन की महिमा' तथा रामप्रसाद निरंजनी क' भाषा योग वशिष्ठ' की रचनाओं में हमें खड़ी बोली गद्य का दर्शन होता हे। इसी क्रम में स्वामी प्राणनाथ की 'शेखमीराजी का किस्सा' भी महत्वपूर्ण रचना हे। लेकिन खड़ी बोली का वास्तविक प्रसार फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के बाद होता है।

अंग्रेजी राज्य के सुचारू रूप से चलाने के लिए अंग्रेजों ने हिन्दी भाषा में पाठ्य पुस्तकें बड़ी संख्या में तैयार करवाई... कुछ के अनुवाद कार्य करवाये। बाईबिल के हिन्दी अनुवाद ने भी हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में अपना योगदान किया। 10-11 वीं सदी की रचना 'राउलवेल' में ही खड़ी बोली के दर्शन होने शुरू हो जाते हैं, किन्तु आधुनिक काल में आकर उसका विशेष प्रसार होता है। फोर्ट विलयम कॉलेज के प्रिंसिपल गिलक्राइस्ट के निर्देशन में, लल्लू लाल, इंशा अल्ला खाँ ने भाषा की पुस्तकें तैयार करवाने में मदद की। इसके अतिरिक्त सदासुखलाल व सदल मिश्र का योगदान भी कम नहीं है। इसी समय पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन ने भी हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारतेन्दु हरिशचन्द्र के आगमन से खड़ीबोली के प्रसार में युगान्तकारी परिवर्तन आया। कविता की भाषा पहले ब्रज और अवधी हुआ करती थी, अब खड़ी बोली में भी कविताएँ होने लगीं। गद्य के क्षेत्र में तो युगान्तकारी परिवर्तन आया ही । गद्य की नई विधाएँ उपन्यास, कहानी, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण आदि हिन्दी भाषा को मिलीं। हिन्दी भाषा ने फारसी, अंग्रेजी एवं अन्यान्य भाषाओं के शब्दों को ग्रहण किया.....।

अभ्यास प्रश्न 1

1. टिप्पणी कीजिए।

1- हिन्दी भाषा का आदिकाल

.....

.....

.....

.....

.....

2- भाषा : अर्थ एवं परिभाषा

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. सत्य/असत्य का चुनाव कीजिए।

1. खड़ी बोली की उत्पत्ति अर्धमागधी अपभ्रंश से हुई है।
2. रामविलास शर्मा ने 'हिन्दी जाति' की अवधारणा पर बल दिया है।
3. हिन्दी भाषा के विकास क्रम को 1000 ई0 के आस-पास से माना जाता है।
4. हिन्दी भाषा में 18 बोलियाँ हैं।
5. मराठी दक्षिणी समुदाय के अंतर्गत मानी जाती है।

1.4 हिन्दी भाषा और मानकीकरण का प्रश्न

हमने अध्ययन किया कि हिन्दी भाषा का क्षेत्रीय विस्तार बहुत ज्यादा है। अलग-अलग बोलियों एवं जनपदीय विस्तार के वैविध्य के कारण हिन्दी भाषा में पर्याप्त असमानताएँ देखने को मिलती हैं। भाषा विविधता के भौगोलिक -ऐतिहासिक कारण होते हैं। ऐतिहासिक कारणों से भाषा नित्य परिवर्तित होती रहती है.... अतः प्रश्न भाषा के पुराने रूपों और नये रूपों के बीच उठ खड़ा होता है। इसी प्रकार भौगोलिक परिवेश की भिन्नता के कारण भी एक ही भाषा में विभेद उत्पन्न हो जाते हैं। मानक भाषा को चयन की प्रक्रिया कहा गया है। हॉगन के शब्दों में भाषा के रूप को कोडबद्ध करने की प्रक्रिया मानकीकरण है। मानकीकरण का तात्पर्य यह है कि किसी भाषा के घटकों में जो विकल्प है, उनमें से एक विकल्प को स्वीकृत कर अन्या विकल्पों को अस्वीकृत कर दिया जाये। समाज द्वारा किसी एक रूप का चयन किया जाये, मानकीकरण का यह प्रयोजन है। भाषा चिंतकों/व्याकरणविदों द्वारा भाषा के किसी निश्चित रूपों के चयन को ही मानकीकरण कहा गया है। मानकीकरण की प्रक्रिया बहुत विस्तृत प्रक्रिया है। किसी भाषा के मानकीकरण के कई आधार है। मानकीकरण के स्वरूप को निम्न इकाइयों के माध्यम से समझा गया है। एक आरेख के माध्यम से हम इसे अच्छे ढंग से समझ सकते हैं-

मानकीकरण का स्वरूप (आरेख)

इसी प्रकार हिन्दी भाषा के मानकीकरण के संदर्भ में भी कई विसंगतियाँ देखने को मिली हैं, जिनके निराकरण का प्रयास समय-समय पर किया गया है। ये प्रश्न देवनागरी वर्णमाला के संदर्भ में, हिन्दी वर्तनी मानकीकरण के संदर्भ में विशेष रूप से उठाये गये हैं।

1.5 हिन्दी और उर्दू का प्रश्न

हिन्दी और उर्दू भाषा एक ही भाषाएँ हैं या स्वतंत्र रूप से अलग भाषाएँ ? उर्दू, हिन्दी की एक शॅली है या उससे स्वतंत्र कोई भाषा? इन प्रश्नों की समझ आवश्यक है। 'उर्दू' शब्द का

और शिवर के अर्थ में लिया गया है। मुगल शिवरों के आस-पास बसे बाजार और सैनिकों की बोलचाल की भाषा के रूप में उूर्द भाषा का जन्म हुआ माना जाता है। हांलाकि दूसरा वर्ग इस तर्क से समहम नहीं है। भाषावैज्ञानिक मत और साथ ही राजनीतिक-धार्मिक पक्ष भी इसी के साथ जुड़ते गये। फलतः यह प्रश्न भी उलझता गया। उर्दू के संदर्भ में 'रेखता' शब्द का प्रयोग भी किया गया है। 1700 ई. में बली दकनी के दक्षिण से दिल्ली आने की घटना से रेखता का संबंध जोड़ा गया है। रेख्ता को फारसी जानने वाले लोग भी समझ सकते थे और हिन्दी समझने वाले लोग भी। धीरे-धीरे इस भाषा में अरबी-फारसी के शब्द बढ़ते गये और यह भाषा की एक नई शैली के रूप में प्रचलित हो गई।

1.6 सारांश

एम.ए0एच0एल-203 की इस इकाई -हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास -का आपने अध्ययन किया। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपने जाना कि-

- प्राकृत भाषा से कई अपभ्रंशों का विकास हुआ। शौरसेनी, पैशाची, महाराष्ट्री, अर्धमागधी एवं मागधी। हिन्दी भाष का सम्बन्ध शौरसेनी अपभ्रंश से है।
- हिन्दी भाषा अपने जनपदीय विस्तार के कारण एक जातीय संस्कृति का रूप ग्रहण का चुकी है। रामविलास शर्मा जैसे विद्वान इसी कारण हिन्दी को 'एक जाति' कहते हैं। हांलाकि इस व्याख्या से द्रविड़ व अन्य संस्कृतियों से हिन्दी के विभेद की संभावना भी बढ़ जाती है।
- भाषा की व्यवस्था में वक्ता, श्रोता, संदेश व संदेश का प्रयोजन अनिवार्य रूप से जुडे रहते हैं।
- हिन्दी भाषा में 5 उप-भाषाएँ और 18 बोलियाँ है, जो सांस्कृतिक रूप में एक-दूसरे से जुड़ी हुई है।
- हिन्दी भाषा के विकास क्रम को तीन कालों में विभक्त कर दिया गया है-
  1. हिन्दी भाषा का आदिकाल (1000- 1500 ई.)
  2. हिन्दी भाषा का मध्य काल (1500- 1800 ई0)
  3. हिन्दी भाषा का आधुनिकाल(1800-से अब तक)

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(1) 2. 1- असत्य
2- सत्य
3- सत्य
4- सत्य

5- सत्य

1.8 शब्दावली

- दाय - प्रभाव, प्रेरणा
- किंचित - मामूली, थोड़ा
- लिप्यान्तरण - भाषा के मौखिक रूप को लिपिबद्ध करना
- यादृच्छिक - इच्छानुसार, निश्चित सिद्धान्त से हट कर भाषा का अर्थ सुनिश्चित करना।
- मानकीकरण - भाषा के किसी निश्चित रूपों का चयन करना।

1.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी भाषा का उद्भव और विकास - तिवारी, उदयनारायण, किताबमहल, इलाहाबाद, संस्करण 1965।
2. हिन्दी भाषा का इतिहास (2) - इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मानविकी विद्यापीठ, अगस्त 2010।

1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - शुक्ल, रामचन्द्र, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
2. हिन्दी भाषा का इतिहास, वर्मा,धीरेन्द्र, इन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भाषा के अर्थ एवं परिभाषा पर विचार कीजिए।
2. हिन्दी भाषा के उद्भव एवं विकास पर निबन्ध लिखिए।

इकाई 2 हिन्दी: उपभाषाएँ एवं बोलियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.1 इकाई की रूपरेखा
2.2 प्रस्तावना
2.2 पाठ का उद्देश्य
2.3 हिन्दीः उपभाषाएँ एवं बोलियाँ
2.3.1 हिन्दी भाषा का विकास क्रम
2.3.2 हिन्दी उपभाषाएँ बोलियाँ
2.4 हिन्दी की प्रमुख बोलियों का परिचय
2.5 भाषा और बोली का अंतर्सम्बन्ध
2.6 सारांश
2.7 शब्दावली
2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने हिन्दी भाषा के उद्भव एवं विकास का अध्ययन किया। आपने अध्ययन किया कि संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि के किस प्रकार हिन्दी भाषा का विकास हुआ। संपूर्ण भारतीय भाषाओं के विकास क्रम का भी आधुनिक भारतीय आर्यभाषा के साथ जुड़ा हुआ है। पिछली इकाई में हमने चर्चा की भी कि हिन्दी भाषा के कई रूप समाज में प्रचलित हैं। कभी-कभी हिन्दी का अर्थ बोलचाल की खड़ी बोली के अर्थ में लिया जाता है तो कभी-कभी साहित्यिक हिन्दी के अर्थ में। अतः हमें खड़ी बोली दिल्ली, मेरठ , बिजनौर, मुराबाद के आस-पास बोली जाने वाली एक बोली है, जबकि 18 बोलियों के समुच्चय का नाम हिन्दी भाषा है। इसीलिए इसे 'जबान-ए-हिन्द' जैसा नाम भी दिया गया था।

हिन्दी भाषा का विकास क्रम किस प्रकार विभिन्न मोड़ों से गुजरा है, इसका अध्ययन आपने कर लिया है । यहाँ हम हिन्दी की उपभाषाएँ एवं उनके अंतर्गत बोली जानेवाली बोलियों के अंतर्सम्बन्ध को समझने का प्रयास करेंगे।

इसी संदर्भ में हम भाषा और बोली के अंतर्सम्बन्ध को भी समझेंगे।

2.2 पाठ का उद्देश्य

एम.ए.एच.एल- 203 की यह द्वितीय इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- हिन्दी के जनपदीय आधार को समझ सकेंगे।
- हिन्दी की सामासिक प्रकृति का अध्ययन करेंगे।
- हिन्दी की उप-भाषाएँ एवं बोलियों के बारे में जान सकेंगे।
- हिन्दी के बोलयों एवं उनके क्षेत्र के बारे में समझ सकेंगे।
- हिन्दी बोलियों के अंतर्सम्बन्ध को जान सकेंगें
- भाषा और बोली के अंतर्सम्बन्ध को समझ सकेंगे।

2.3 हिन्दीः उपभाषाएँ एवं बोलियाँ

2.3.1 हिन्दी भाषा का विकास क्रम

हिन्दी भाषा के विकास क्रम के अध्ययन में हमने पढा़ कि हिन्दी भाषा का संबंध आधुनिक भारतीय आर्याभाषा से है। प्रथम आर्यभाषा का काल 1500 से 500 ई. पूर्व तक, द्वितीय आर्यभाषा का काल 500 ई.0 पू0 से लेकर 1000 ई. तक तथा तीसरी या आधुनिक भारतीय आर्यभाषा का काल 1000 ई0 से अब तक निर्धारित किया गया है।

इसी प्रकार हिन्दी भाषा के विकास काल को भी तीन चरणों में विभक्त कर दिया गया है।

1. 1000 - 1500 ई0
2. 1500 - 1800 ई0 तथा
3. 1800 - से अब तक के काल तक

इस प्रकार भाषा का विकास काल क्रमशः आगे बढ़ता गया है। हिन्दी भाषा, जो कभी मात्र कुछ जनपदों की बोली थी, आज उसने सामासिम रूप ग्रहण कर लिया है।

हिन्दी भाषा के विकास क्रम को यदि देखा जाये तो कुछ बाते स्पष्ट हैं -

1. भाषा क्रमशः जटिलता से सरलता की ओदर बढी़ है।
2. क्रियारूपों से सरलीकरण की प्रवृत्ति देखने को मिलती है।
3. हिन्दी भाषा में ग्रहणशीलता की प्रवृत्ति तीव्र होती गई है। मध्यकाल तक इसने अरबी-फ़ारसी के शब्द ग्रहण कर लिये थे तथा आधुनिक काल तक आते-आते इसने पुर्तगाली, फ्रांसीसी और अंग्रेजी के शब्द पर्याप्त मात्रा में ग्रहण किया। आज की हिन्दी भाषा तो अंग्रेजी से ज्यादा ही प्रभावित हुई है।
4. हिन्दी भाषा के बोलने वालों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई है। एक भाषा के रूप में यह आज विश्व की कुछ प्रमुख भाषाओं में से एक है।

5. हिन्दी भाषा के विकास क्रम की एक विशेषता इसका उन्नत साहित्य भी है। समय और संदर्भानुकूल हिन्दी भाषा ने अपने को युग-परिवेश से जोड़ा है।

2.3.2 हिन्दी उपभाषाएँ एवं बोलियाँ

आज जिसे हम हिन्दी भाषा कहते हैं, उसमें कोई एक भाषा नहीं है, बल्कि इसमें कई प्रदेशों की बोलियाँ सम्मिलित हैं। तो क्या इसका यह अर्थ लगाया जा सकता है कि हिन्दी का अपना कोई क्षेत्र नहीं है? नहीं ऐसा नहीं कहा जा सकता। बड़ी/समृद्ध भाषाएँ अपना विस्तारस विभिन्न जनपदों व परिवेशों में कर लेती है। अतः उनका जनपद विस्तृत हो जाता है। ब्रजभाषा या अवधी भाषा स्वतंत्र भाषाएँ हैं। या सूर, तुलसी हिन्दी के कवि नहीं है..... इस प्रकार के तर्क विभिन्न आलोचकों द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। भाषा और बोली के भेद को आधुनिक काल में विशेष रूप से उठाया गया हे। हिन्दी के संदर्भ में एक प्रश्न यह भी उठाया गया हे इसकी बोलियों में परस्पर भिन्नता की स्थिति है। एक ही भाषा की बोलियों में इतना भेद उचित नहीं है। इस प्रकार के प्रश्न को भाषा वैज्ञानिक ढंग से ही समझा जा सकता है, दूसरे हिन्दी भाषा की संस्कृति के आधार पर भी इन प्रश्नों का समाधान किया जा सकता है।

हिन्दी भाषा के प्रसार एवं विस्तार का प्रश्न वैश्विक हो चला है। एशिया के कई देशों में हिन्दी भाषा बोली और समझी जाती है। जबकि सैकड़ों देशों में हिन्दी भाषा का अध्यापन कार्य चल रहा है, इस प्रकार यह सांस्कृतिक संपर्क का कार्य कर रही है।

हिन्दी भाषा के क्षेत्रीय प्रसार को 'हिन्दी भाषी क्षेत्र' कहा गया है। इसमें दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तराखण्ड, हिमांचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान इत्यादि प्रदेश आते हैं। इन प्रदेश में बोली जाने वाली बोलियों को मिलाकर हिन्दी भाषी प्रदेश बनता है। यहाँ हम हिन्दी की उपभाषा एवं बोलियों का परिचय देखें-

हिन्दी भाषा

	उपभाषा		**बोलियाँ**
1.	**पश्चिमी हिन्दी**	1.	खड़ी बोली
		2.	बांगरू या हरियाणवी
		3.	ब्रजभाषा
		4.	कन्नौजी
		5.	बुन्देली
2.	**पूर्वी हिन्दी**	1.	अवधी
		2.	वघेली
		3.	छत्तीसगढ़ी
3.	**राजस्थानी**	1.	मेवाती
		2.	मालवी

			3.	हाड़ौती (जयपुरी)
			4.	मारवाड़ी (मेवाड़ी)
4.	**बिहारी**	-	1.	भोजपुरी
			2.	मगही
			3.	मैथिली
5.	**पहाड़ी**	-	1.	कुमाऊँनी
			2.	गढ़वाली
			3.	नेपाली

अभ्यास प्रश्न 1

टिप्पणी कीजिए।

1. हिन्दी भाषा का विकास क्रम

.....

.....

.....

.....

.....

2. हिन्दी उपभाषाएँ एवं बोलियाँ

.....

.....

.....

.....

.....

2- सत्य/असत्स का चुनाव कीजिए।

1. कन्नौजी पश्चिमी हिन्दी की बोली है।
2. हिन्दी की 5 उपभाषाएँ हैं।
3. अवधी पूर्वी हिन्दी की बोली है।
4. मैथिली पश्चिमी हिन्दी की बोली है।
5. पहाड़ी में तीन बोलियाँ आती है।

3.4 हिन्दी की प्रमुख बोलियों का परिचय

हिन्दी भाषा के उपभाषाओं एवं बोलियों का आपने अध्ययन कर लिया है। 5 उपभाषाओं एवं 18 बोलियों में विभक्त हिन्दी भाषा भारतीय संस्कृति की प्रतिनिधि भाषा रही है। अब हम हिन्दी की प्रमुख बोलियों एवं उपभाषाओं का अध्ययन करेंगे।

1. पश्चिमी हिन्दी

हिन्दी का उप-भाषाओं में से सर्वाधिक प्रमुख उप-भाषा के रूप में पश्चिमी हिन्दी की गणना की जाती है। इस उपभाषा का क्षेत्र दिल्ली, ब्रज, हरियाणा, कन्नौज व बुंदेलखण्ड के क्षेत्रों को अपने में समेटे हुए हैं। खड़ी बोली और ब्रजभाषा के कारण यह हिन्दी का प्रतिनिधि उपभाषा परिवार है। आइए इसकी बोलियों का संक्षेप में परिचय प्राप्त करें-

(क) **खड़ी बोली** - खड़ी बोली का क्षेत्र मेरठ, बिजनौर, मुजफ्फर, सहारनपुर, मुरादाबाद, रामपुर आदि जिले है। साहित्य की दृष्टि से खड़ी बोली का साहित्य सर्वाधिक समृद्ध है।

2. **ब्रज** - ब्रजभूमि में बोली जाने वाली भाषा का नाम ब्रजभाषा है। मथुरा, वृंदावन के आस-पास का क्षेत्र, आगरा मथुरा, एटा, मैनपुरी, फर्रूखाबाद, बुलंदशहर, बदायूँ आदि जिलों में ब्रजभाषा बोली जाती है। सूर, अष्टछाप का साहित्य, बिहारी, देव, घत्रनंद समेत पूरा रीतिकाल, जगन्नाथदास रत्नाकर, हरिऔध जैसे कवियों के साहित्य से ब्रजभाषा समृद्ध है। व्याकरणिक दृष्टि से ओ/औ करांत इसी विशेषता है। गयो, भलो, कहयो इत्यादि शब्द इसके उदाहरण हैं।

3. **कन्नौजी** - कन्नौजी का क्षेत्र पश्चिमी उत्तर प्रदेश के इटावा, फर्रूखाबाद, शाहजहाँपुर आदि जिले हैं। कानपुर, हरदोई के हिस्से भी कन्नौजी के क्षेत्र हैं। यह ब्रजभाषा और बुन्देली के बीच का क्षेत्र है। खोटो, छोटो, मेरो, भयो, बइठो इत्यादि 'ओ' कारान्त भाषा के रूप में कन्नौजी को देखा जा सकता है।

4. **बुन्देली** - बुन्देलखण्ड जनपद की बोली को बुन्देली कहा गया है। इस बोली का क्षेत्र झाँसी, जालौन, सागर, होशंगाबाद, भोपाल इत्यादि है।

5. **बाँगरू (हरियाणवी)** - हरियाणा प्रदेश की बोली को हरियाणवी कहा गया है। यह बोली दिल्ली के कुद हिस्सों में, करनाल, रोहतक अंबाला आदि जिलों में बोली जाती है। को के लिए ने का प्रयोग हरियाणवी की विशेषता है।

(ख) पूर्वी हिन्दी - पूर्वी हिन्दी में तीन बोलियाँ हैं- अवधी, बघेली एवं छत्तीसगढ़ी । पूर्वी हिन्दी उपभाषा, हिन्दी में विशिष्ट स्थान रखता है, क्योंकि इसमें तुलसीदास व रामचरितमानस जैसी कृतियाँ हैं। आइए पूर्वी हिन्दी की बोलियों से परिचित हों।

1. **अवधी** - अवध मण्डल की बोली को अवधी कहा गया है। इस भाषा का प्रमुख क्षेत्र लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, फैजाबाद, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, फतेहपुर आदिजिले आते हैं रामभक्ति शाखा का केंन्द्र अवध मण्डल ही रहा है। इस भाषा में तुलसीदास प्रमुख कवि हैं।

2. **बघेली** - बघेलखण्ड की बोली को वघेली कहा गया है। बघेली में रीवाँ, जबलपुर, माँडवा, बालाघाट आदि जिले आते हैं। वघेली में लोक साहित्य मिलता है।

3. **छतीसगढ़ी** - छतीसगढ़ की बोली को छतीसगढ़ी कहा गया है। मध्यप्रदेश के रायपुर, विलासपुर जिले इसके प्रमुख केन्द्र हैं।

(ग) राजस्थानी - राजस्थानी, हिन्दी का प्रमुख उपभाषा है। राजस्थानी उपभाषा में चार बोलियाँ हैं। मारवाड़ी, मेगती, जयपुरी एवं मालवी। रासो साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक राजस्थानी साहित्य का हिन्दी पर प्रभाव देखा जा सकता है।

1. जयपुरी - जयपुर केन्द्र होने के कारण इसे जयपुरी कहा गया है। इस बोली को ढूँढ़ाली भी कहते हैं। हाडैती इसकी उपबोली है। जयपुरी बोली के क्षेत्र कोटा, बूँदी के जिले एवं जयपुर हैं।

2. मेवाती - यह राजस्थानी के उत्तर सीमा के अंतर्गत बोली जाती है। इसकी प्रमुख उपबोली अहीरवाटी है। मेवाती अलबर, भरतपुर औ गुड़गाँव के जिलों में बोली जाती है।

3. मालवी - दक्षिणी राजस्थान की बोली को मालवी कहा जाता है। मालवी का मुख्य क्षेत्र दक्षिणी राजस्थान के बूँदी, झालावाड़ जिले तथा उत्तरी मध्यप्रदेश के मंदसौर, इंदौर, रतलाम आदि जिले आते हैं। यह बोली गुजराती और पश्चिमी हिन्दी के बीच की है।

4. मारवाड़ी - राजस्थानी की पश्चिमी बोली का नाम मारवाड़ी हे। इसका केन्द्र मारवाड़ है। इसका केन्द्र मारवाड़ हे। इस बोली का केन्द्र जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, उदयपुर आदि जिले हैं । हिन्दी साहित्य की वीरगाथाएँ मारवाड़ी में ही लिखी गयी थीं। मीरा का काव्य मारवाड़ी में ही रचित हे। इस प्रकार राजस्थानी की बोलियों में मारवाड़ी साहित्यिक दृष्टि से सर्वाधिक परिष्कृत है।

(घ) बिहारी - इस उपभाषा का केन्द्र बिहार होनेके कारण इसका नाम बिहारी पडा है। बिहारी उपभाषा में तीन बोलियाँ है- भोजपुरी, मगही एवं मैथिली।

1. भोजपुरी - भोजपुरी, बिहारी की सर्वाधिक बोली जाने वाली बोली है। बिहार का भोजपुर जिला इस बोली का केन्द्र है। इस बोली के प्रमुख क्षेत्रों में- बलिया, बस्ती, गोरखपुर, आजमगढ़, गाजीपुर, जौनपुर, वाराणसी, मिर्जापुर, सोनभद्र, चंपारन, सहारन, भोजपुर, पालामऊ आदि आते हैं। इस प्रकार इस बोली का केन्द्र मुख्य रूप से बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश है। भोजपुरी भाषा में पर्याप्त लोक साहित्य मिलता है। कबीर जैसे बड़े कवि के ऊपर भी भोजपुरी का प्रभाव है। आज भोजपुरी फिल्मों ने इस बोली को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि दी है। भोजपुरी विदेशों में- मारीशस, सूरीनाम में भी प्रचलित व लोकप्रिय है।

2. मगही - मगध प्रदेश की भाषा होने के कारण इसका नाम मागधी पड़ा है। यह बोली मुख्य रूप से बिहार के पटना, गया आदि जिलों में बोली जाती है।

3. मैथिली - मिथिला प्रदेश की भाषा होने केकारण इस भाषा का नाम मैथिली है । यह बोली प्रमुख रूप से उत्तरी बिहार एवं पूर्वी बिहार के चंपारन, मुजफ्फरपुर, मुंगेरे, भागलपुर, दरभंगा, पूर्णिया आदि जिलों में बोली जाती है। मैथिली हिन्दी की भाषा है या नहीं? इस प्रश्न को लेकर मतैक्य नहीं है/वैसे परम्परागत रूप से मैथिली को हिन्दी भाषा की बोली के रूप में ही स्वीकृति मिली हुई है। साहित्यिक दृष्टि से मैथिली, बिहारी उपभाषा की बोलियों में

सर्वाधिक संपन्न है। मैथिल कोकिल विद्यापति तो हिन्दी भाषा के गौरव है हीं। आधुनिक कवियों में नागर्जुन जैसे समर्थ कवि मैथिल भाषा की मिट्टी से ही ऊपजे हैं।

(च) पहाड़ी उपभाषा - इस उपभाषा का संबंध पहाड़ी अंचल की बोलियों से जुड़ा हुआ है, इसलिए इसे पहाड़ी नाम दिया गया है। हिन्दी भाषा के पहाड़ी अंचल में उत्तराखण्ड व हिमांचल प्रदेश का क्षेत्र आता है। ग्रियर्सन ने नेपाली को भी पहाड़ी के अंतर्गत माना था। इस उपभाषा के दो भाग किये गये हैं- पश्चिमी और मध्यवर्ती। पश्चिमी पहाड़ी में जौनसारी, चमोली, भद्रवाही आदि बोलियाँ आती है तथा मध्यवर्ती पहाड़ी में कुमाऊँनी एवं गढ़वाली।

1. कुमाऊँनी - कुमाऊँ खण्ड में जाने कारण इस बोली का नाम कुमाऊँ पड़ा है। उत्तराखण्ड के उत्तरी सीमा/क्षेत्र इसका केन्द्र है। यह बोली उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी, नैनीताल, अल्मोड़ा, पिथौरागढ़, चम्पावत आदि जिलों में बोली जाती है। कुमाऊँ बोली में समृद्ध साहित्य मिलता है। कुमाऊँ ने हिन्दी साहित्य को सुमित्रानंदन पंत, शेखर जोशी, मनोहरश्याम जोशी, इलाचन्द्र जोशी जैसे बड़े साहित्यकार दिये हैं।

2. गढ़वाली - उत्तराखण्ड के गढ़वाल खण्ड की बोली होने के कारण इसका नाम गढ़वाली पड़ा है। यह बोली प्रमुख रूप से उत्तरकाशी, टेहरी गढ़वाल, पौड़ी गढ़वाल, दक्षिणी नैनीताल, तराई देहरादून, सहारनपुर, बिजनौर जिलों में बोली जाती है। गढ़वाली में समृद्ध लोक साहित्य मिलता है। गढ़वाली की उपभाषाओं में राठी, श्रीनगरिया आदि हैं। गढवाल मंडल ने हिन्दी साहित्य को पीताम्बर दत्त बर्थवाल, वीरेन डंगवाल और मंगलेश डबराल जैसे ख्यातिनाम साहित्यकार दिये हैं।

2.5 भाषा और बोली का अंतर्सम्बन्ध

किसी भी समृद्ध भाषा की बोलियाँ और उप-बोलियाँ होती है। हिन्दी के संदर्भ में यह प्रश्न उठाया जाता रहा है कि इसके विभिन्न रूप, क्षेत्रीय विभेद को बढ़ावा देते हैं। जबकि यही प्रश्न लैटिन, ग्रीक, फ्रेंच, रूसी के संदर्भ नहीं उठाया जाता । जाहिर है, इस प्रश्न के मूल में राजनीति ज्यादा होती है, यर्थाथ कम। किसी भी समृद्ध भाषा का विस्तार भौगोलिक एवं साहित्यिक दृष्टि से बहुत ज्यादा होता है, इसलिए एक बोली से दूसरी बोली में सम्प्रेषणीयता की समस्या खड़ी हो जाती है। बोली (1) और बोली (18) में इतना भौगोलिक अंतर होता है, कि उनके बीच सम्प्रेषण की समस्या उठना स्वाभाविक ही है। भाषा और बोली के अंतर्सम्बन्ध का एक प्रश्न राजनीतिक और साहित्यिक भी है। एक ही बोली राजनीतिक-साहित्यिक कारणों से कभी बोली बन जाती है और कभी भाषा। इस संदर्भ में भाषा वैज्ञानिकों ने लक्षित किया है कि खड़ीबोली जो कभी कुछ-एक जनपदों में बोली जाने वाली बोली भी, राजनीतिक-साहित्यिक कारणों से भाषा का रूप ले लेती है। और केवल भाषा ही नहीं बनती बल्कि एक संस्कृति बन जाती है। इसी प्रकार मध्यकाल की ब्रजभाषा एवं अवधी भाषाएँ क्रमशः बोलियों का रूप ले लेती है। इस प्रकार भाषा और बोलियों के अंतर्सम्बन्ध को कई रूपों में समझा जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1- रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. ब्रजभाषा ..... की बोली है। (पूर्वी हिन्दी/पहाड़ी/पश्चिमी हिन्दी)
2. मेरठ ..... का क्षेत्र हैं। (ब्रजभाषा/खड़ी बोली/अवधी)
3. वृंदावन ..... का क्षेत्र है।(अवधी/ कन्नौजी/ब्रज)
4. बलिया ..... का क्षेत्र हैं। (बुन्देली/अवधी/भोजपुरी)
5. हरियाणवी ..... में बोली जाती है। (छतीसगढ़/करनाल/जबलपुर)

2- सत्य/असत्य का चुनाव कीजिए।

1. रायपुर में छतीसगढ़ी बोली जाती है।
2. कोटा क्षेत्र में जयपुरी बोली, बोली जाती है।
3. जोधपुर क्षेत्र में मारवाड़ी बोली जाती है।
4. मगध क्षेत्र में भोजपुरी बोली जाती है।
5. चंपारन में मगही बोली जाती है।

2.6 सारांश

एम.ए0एच.एल- 203 की यह इकाई हिन्दी की उपभाषाओं एवं बोलियों पर केंन्द्रित है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि -

- हिन्दी के कई रूप समाज में प्रचलित हैं। बोलचाल की हिन्दी, कार्यालयी हिन्दी, साहित्यिक हिन्दी।
- खड़ी बोली और हिन्दी भाषा की व्यंजना के अंतर की समझ भी आवश्यक है। खड़ी बोली कुछ जनपदों की बोली है, जबकि हिन्दी भाषा 18 बोलियों का समुच्चय है।
- हिन्दी भाषा लोचदार एवं गतिशील भाषा रही है। हिन्दी भाषा ने न केवल दूसरी भाषाओं के शब्दों के ग्रहण किया है, अपितु सम्वेदना का विस्तार भी किया है।
- हिन्दी भाषा पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, राजस्थानी, बिहारी एवं पहाड़ी उपभाषाओं एवं इन उपभाषाओं की 18 बोलियों से मिलकर बनी है।
- पश्चिमी हिन्दी प्रमुख उपभाषा है। इसमें ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली जैसी समृद्ध भाषाएँ हैं।
- भाषा और बोली का घनिष्ठ सम्बन्ध है। राजनीतिक, साहित्यिक कारणों से एक बोली, भाषा का रूप ले लेती है तो कभी भाषा, बोली में परिवर्तित हो जाती है।

2.7 शब्दावली

- समुच्चय - संकलन, साथ
- अंतर्सम्बन्ध - आंतरिक संरचना का जुड़ाव

- संदर्भानुकूल - देश-काल-परिस्थिति के अनुकूल
- मण्डल - कई जिलों को मिलाकर बना एक क्षेत्र।

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1- 2.

1. सत्य
2. सत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. सत्य

2) 1.

1. पश्चिमी हिन्दी
2. खड़ी बोली
3. ब्रज
4. भोजपुरी
5. करना

2-

1. सत्य
2. सत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. असत्य

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी भाषा का विविधरूप –इग्नू , मानविकी विद्यापीठ, 2010।

2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. हिन्दी और उसकी उपभाषाओं का स्वरूप - सुमन, अंबा प्रसाद, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. हिन्दी की उपभाषा एवं बोलियों का परिचय दीजिए।
2. पश्चिमी हिन्दी पर टिप्पणी लिखिए।

इकाई 3 भारतीय संविधान एवं हिन्दी

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 पाठ का उद्देश्य
3.3 भारतीय संविधान एवं हिन्दी
3.3.1 संविधान और हिन्दी
3.3.2 राजभाषा अधिनियम
3.4 राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा का प्रश्न
3.5 साराश
3.6 शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यात मिली है। अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार हिन्दी संघ की राजभाषा है। भारतीय भाषाओं में राजभाषा बदलती रही। किसी भी युग में राजभाषा का गौरव उस युग की समृद्ध भाषा को मिलता रहा है। हांलाकि समृद्धता का कोई वस्तुगत मापदण्ड नहीं है। कई बार राजनीतिक-धार्मिक कारणों से भी किसी भाषा को राजभाषा बना दिया जाता है। मुगल काल में फारसी भारत की राजभाषा थी, लेकिन फारसी संपूर्ण देश के निवासियों की भाषा नहीं थी। इस प्रकार राजभाषा बनने के कई कारक होते हैं। भारत की राजभाषा पहले संस्कृत थी, फिर बौद्ध शासन काल में पालि हुई, उकसे बाद प्राकृत....। क्रमशः फारसी और अंग्रेजी शासनकाल में अंग्रेजी। लम्बे संघर्ष के पश्चात हिन्दी को भारत की राजभाषा के रूप में स्वीकृति मिली। लेकिन हिन्दी को राजभाषा बनाये जाने संबंधी प्रावधान इतने सीधे नहीं थे। दक्षिण भारतीय राज्यों के बिरोध के कारण उसे 15 वर्षों तक और फिर 1976 के अधिनियम के अनुसार 'क', 'ख', एवं 'ग' क्षेत्रों में विभक्त कर दिया गया हे। इस प्रकार संवधिान में हिन्दी का स्थान महत्वपूर्ण तो है, लेकिन इसे व्यावहारिक स्तर पर लागू नहीं किया जा सका है।

इसी प्रकार राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा का प्रश्न भी है राजकाज की भाषा के रूप में हिन्दी भारत की राजभाषा है, लेकिन सामाजिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की दृष्टि से हिन्दी राष्ट्रभाषा। इस दृष्टि से भारत की अन्य समृद्ध भाषाएँ भी राष्ट्रभाषाएँ हैं।

3.2 उद्देश्य

भारतीय संविधान एवं हिन्दी शीर्षक इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- हिन्दी भाषा की संवैधानिक स्थिति को समझ सकेंगे।
- संविधान में हिन्दी की स्थिति को जान सकेंगे
- विभिन्न राजभाषा अधिनियमों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- संविधान के अंतर्गत भाषा-विभाजन (क्षेत्र विभाजन) को समझ सकेंगे।
- राजभाष एवं राष्ट्रभाषा के अंतर को समझ सकेंगे।
- राजभाषा से संबंधित पारिभाषिक शब्दसवलियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3.3 भारतीय संविधान एवं हिन्दी

भारतीय संविधान में भाषा संबंधित 11 अनुच्छेद हैं। संविधान के 18 भागों में, भाग 17 भाषा संबंधी व्यवस्था पर आधारित है। यहाँ हम संविधान में हिन्दी का क्या स्थान है, इस विषय का अध्ययन करेंगे।

3.3.1 संविधान और हिन्दी

संघ की राजभाषा-

1. अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी और इसकी लिपि देवनागरी होगी।
2. खंड 1 में इस बात का संकेत है कि संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की अवधि तक संघ उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का उपयोग किया जाता रहेगा।
3. इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद उक्त 15 वर्ष की अवधि के पश्चात्, विधि द्वारा-

(क) अंग्रेजी भाषा का, या

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी, जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएँ।

3.3.2 राजभाषा अधिनियम

अध्याय 2 - प्रादेशिक भाषाएँ

345. राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ - अनुच्छेद 346 और अनुच्छेद 347 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में स्वीकार/अंगीकार कर सकेगा।

परन्तु जब तक राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, अन्यथा उपबन्ध न करे तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा।

346. एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की राजभाषा- संघ में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किये जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा होगी।

347. किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध यदि राष्ट्रपति को यह लगता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निर्देश दे सकता है कि ऐसी भाषा केा भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

I. उस भाषा के बोलने वालों की पर्याप्त संख्या हो,
II. वे माँग करे कि उनकी भाषा को मान्यात दी जाए।

संविधान के भाग 17 के अध्याय 3 के दो अनुच्छेदों-अनुच्छेद 348 तथा 349 में उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों की भाषा के सवाल पर विचार किया गया है।

इस अनुच्छेद में उच्चतम न्यायालय तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियाँ अंग्रेजी में करने का प्रावधान है।

अनुच्छेद 344 (1) और 351 अष्टम सूची से संबंधित है। अष्टम अनुसूची की भाषाएँ हैं-

1. असमिया
2. उड़िया
3. उर्दू
4. कन्नड़
5. कश्मीरी
6. गुजराती
7. तमिल
8. तेलुगु
9. पंजाबी
10. बांग्ला
11. मराठी
12. मलयालम

13. संस्कृत
14. सिंधी
15. हिन्दी।

संविधान के भाग 17 के अंतिम परिच्छेद (अनुच्छेद 351) 'हिन्दी भाषा के विकास के निर्देष' से संबंधित है। अनुच्छेद 351 में कहा गया है कि संघ का यह कर्त्तव्य होगा कि हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, जिससे वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची मे विर्निदिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक हो वहाँ मुखतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें। इस अनुच्छेद के निम्नलिखित तथ्य हैं-

I. संघ का पहला दायित्व है कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए।
II. संघ का यह दायित्व होगा कि वह हिन्दी का विकास इस रूप में करे कि वह भारत की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।
III. संघ का यह दायित्व होगा कि वह हिन्दी की समृद्धि सुनिश्चित करें।

राजभाषा आयोग और राष्ट्रपति आदेश

संविधान के अनुच्छेद 343 (2) के अनुसार राष्ट्रपति ने 27 मई 1952 को आदेश जारी किया जिसमें राज्यपालों और उच्चतक तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्तियों के अधिपत्र में अंग्रजी के साथ हिन्दी के प्रयोग को भी लागू किया जाये।

3 दिसम्बर, 1955 के राष्ट्रपति के आदेश द्वारा संघ के निम्नलिखित सरकारी प्रयोजनों में अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी के प्रयोग को भी लागम किया जाये-

I. जनता से व्यवहार
II. प्रशासनिक रिपोर्टे, सरकारी पत्रिकाएँ तथा संसद में प्रस्तुत रिपोर्ट
III. सरकारी संकल्प एवं विधायी अधिनियम।
IV. राजभाषा हिन्दी वाले प्रदेशों के साथ पत्र व्यवहार में
V. संधियों और करार
VI. अन्य देशों की सरकारों, राजदूतों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ पत्र व्यवहार
VII. राजनयिक और कांसल के पदाधिकारयिों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में भारतीय प्रतिनिधियों के नाम जारी किये जाने वाले औपचारिक दस्तावेज।

राजभाषा अधिनियम (1963)

यथासंशोधित राजभाषा अधिनियम, 1963

(1963 का अधिनियम स0 19)

(10 मई, 1963)

उन भाषाओं का जो संघ के राजकीय प्रयोजनों , संसद कार्य के संव्यवहार, केन्द्रीय और राज्य अधिनियमों और उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के लिए प्रयोग में लाई जा सकेंगी, उपबन्ध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के चौदवे वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो-

1. संक्षिप्त नाम और प्रारम्भ

1) यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा।

2) धारा3, जनवरी, 1965 के 26वें दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबन्ध उस तारीख को प्रवृत्त होंगे जिसे केन्दीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्धों के लिए विभिनन तारीखें नियत की सकेंगी।

2. परिभाषाएँ :

इस अधिनियम में, जब तक कि प्रसंग में अन्यथा अपेक्षित न हो,-

(क) ''नियत दिन'' से, धारा 3 के सम्बन्ध में , जनवरी, 1965 का 26वाँ दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबन्ध के सम्बन्ध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबन्ध प्रवृत्त होत है;

(ख) ''हिन्दी'' से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है।

3. संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए और संसद में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का बना रहना।

(1) संविधान के प्रारम्भ से 15 वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी, हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत दिन से ही-

(क) संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए वह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लायी जाती थी; तथा

(ख) संसद में कार्य के संव्यवहार के लिए; प्रयोग में लायी जाती रह सकेगीः

परन्तु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगीः

राजभाषा नियम 1976

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976

राजभाषा विभाग की अधिसूचना सं. 11011/1/73-रा.भा. (1) दिनांक 28-6-76 की प्रतिलिपि सा.का.नि. - राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियां का प्रयोग करते हुए केंन्द्रीय सरकार निम्नलिखित नियम बनाती है अर्थात्ः

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ - 1) इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम 1976 है।

2. इनका विस्तार तमिलनाडु राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है।

3. से राजपत्र में प्रकाशन की तारीख को प्रवृत्त होंगे।

2) परिभाएँ - इन नियमों में जब तक कि संदर्भ से अन्याथा अपेक्षित न होः

क) ''अधिनियम'' से राजभाषा अधिनियम 1963 (1963 का 19) अभ्रिपेत हैः

ख) ''केन्द्रीय सरकार के कार्यालय'' के अंतर्गत निम्नलिखित भी है अर्थात्ः

I. केन्द्रीय सरकार का कोई मंत्रायल, विभाग या कार्यालय

II. केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी आयोग, समिति या अधिकरण का कोई कार्यालय और

III. केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण के अधीन किसी नियम या कंपनी का कोई कार्यालय;

ग) ''कर्मचारी'' से केंन्द्रीय सरकार के कार्यालय में नियोजित कोई व्यक्ति अभिप्रेत है;

घ) ''अधिसूचित कार्यालय'' से नियम 10 के उपनियम 4) के अधीन अधिसूचित कार्यालय अभिप्रेत है;

ङ) ''हिन्दी में प्रवीणता'' से नियम 9 में वर्णित प्रवीणता अभिप्रेत है;

च) ''क्षेत्र के'' से बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रेदश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य तथा दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है;

छ) ''क्षेत्र ख'' से गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह एवं चंडीगढ़ संघ राज्य अभिप्रेत है;

ज) ''क्षेत्र ग'' से खंड (च) और (छ) में निर्दिष्ट राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों से भिन्न राज्य तथा संघ राज्य क्षेत्र अभिप्रेत है;

झ) ''हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान'' से नियम 10 में वर्णित कार्यसाधक ज्ञान अभिप्रेत है।

राज्यों आदि और केंन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्रादि-1

केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'क' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि असाधारण दशाओं को छोड़कर हिन्दी में होंगे और यदि उनमें किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा।

2) केंन्द्रीय सरकार के कार्यालय से-

क) क्षेत्र 'ख' के किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि मामूली तौर पर हिन्दी और यदि इनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा। परन्तु यदि कोई राज्य या संघ राज्यक्षेत्र यह चाहता है कि किसी विशिष्ट वर्ग या प्रवर्ग के पत्रादि या उसके किसी कार्यालय के साथ पत्रादि संबद्ध राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट अवधि तक अंग्रेजी या हिन्दी में भेजे जाएँ और उसके साथ दूसरी भाषा में उसका अनुवाद भी भेजा जाए तो पत्रादि उसी रीति से भेजे जाएँगे।

ख) क्षेत्र 'ख' के किसी राज्य या संघ राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते हैं।

3) केन्द्रीय सरकार के कार्यालय के क्षेत्र 'ग' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि अंग्रेजी में होंगे।

4) उपनियम1) और 2) में किसी बात के होत हुए भी क्षेत्र 'ग' में केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र 'क' या क्षेत्र 'ख़' में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केन्द्रीय सरकार के कार्यालय न हों) या व्यक्ति की पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं।

4) केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि

क) केन्द्रीय सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

ख) केन्द्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग और क्षेत्र 'क' में स्थित संलग्न या अधीनस्थ कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे और ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाएँ और उससे संबंधित आनुषंगिक बातों का ध्यान रखते हुए समय पर अवधारित करें;

ग) क्षेत्र 'क' में स्थित केंन्द्रीय सरकार के एसे कार्यालयों के बीच जो खंड (क) या खंड (ख) में विनिर्दिष्ट कार्यालय से भिन्न है पत्रादि हिन्दी में होंगे;

घ) क्षेत्र 'क' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और क्षेत्र 'ख' या क्षेत्र 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं;

ङ) क्षेत्र 'ख' या 'ग' में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते है :

परन्तु जहाँ ऐसे पत्रादि-

I. 'क' क्षेत्र के किसी कार्यालय को संबोधित हों वहाँ उनका दूसरी भाषा में अनुवाद पत्रादि प्राप्त करने के स्थान पर किया जाएगा।

II. क्षे 'ग' में किसी कार्यालय को संबोधित है वहाँ उनका दूसरी भाषा में अनुवाद उनके साथ भेजा जाएगाः

परन्तु यह और कि यदि कोई पत्रादि किसी अधिसूचित कार्यालय को संबोधित है तो दूसरी भाषा में ऐसा अनुवाद उपलब्ध कराने की अपेक्षा नहीं की जाएगी।

5) हिन्दी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर - नियम 3 और 4 में किसी बात के होते हुए भी हिन्दी में पत्रादि के उत्तर केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से हिन्दी में दिए जाएँगे।

6) हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग -अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (3) में विनिर्दिष्ट सभी दस्तावेजों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा

और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह सुनिश्चित कर लें कि ऐसे दस्तावेज हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में तैयार किये जाते हैं, निष्पादित किये जाते है और जारी किए जाते हैं।

7) आवेदन, अभ्यावेदन, आदि-1) कोई कर्मचारी आवेदन अपील या अभ्यावेदन हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है।

2) जब उपनियम 1) में निर्दिष्ट कोई आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी में किया गया हो उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर किए गए हों तब उसका उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा।

3) यदि कोई कर्मचारी यह चाहता है सेवा संबंधी विषयों (जिसके अंतर्गत अनुशासनिक कार्यवाहियाँ भी हैं) से संबंधित कोई आदेश या सूचना जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है यथास्थिति हिन्दी या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे असम्यक् विलंब के बिना उसी भाषा में दी जाएगी।

8) केंन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में टिप्पणों का लिखा जाना - 1) कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पणी या मसौदा हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उसे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करे।

2) केन्द्रीय सरकार का कोई भी कर्मचारी, जो हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखता है, हिन्दी में किसी दस्तावेज के अंग्रेजी अनुवाद की माँग तभी कर सकत ाहै, जब वह दस्तावेज़ विधिक या तकनीकी प्रकृति का है, अन्यथा नहीं।

3) यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट दस्तावेज विधिक या तकनीकी प्रकृति का है या नहीं तो विभाग या कार्यालय का प्रधान उसका विनिश्चय करेगा।

4) उपनियम 1) में किसी बात के होत हुए भी, केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा ऐसे अधिसूचित कार्यालयों को विनिर्दिष्ट कर सकती है जहाँ ऐसे कर्मचारियों द्वारा, जिन्हे हिन्दी में प्रणीणता प्राप्त है, टिप्पण, प्रारूपण और ऐसे अन्य शासकीय प्रयोजनों के लिए जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएँ, केवल हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा।

9) हिन्दी के प्रणीणता- यदि किसी कर्मचारी ने -

क) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी के माध्यम से उतीर्ण कर जी है या

ख) स्नातक परीक्षा में अथवा स्नातक परीक्षा की समतुल्य या उससे उच्चतर किसी अन्य परीक्षा में हिन्दी को एक वैकल्पिक विषय के रूप में लिया था; या

ग) यदि वह इन नियमों को उपाबद्ध प्ररूप से यह घोषणा करता है कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर जी है।

10) हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान-1) (क) यदि किसी कर्मचारी ने-

I. मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर परीक्षा हिन्दी विषय के साथ उतीर्ण कर ली है; या

II. केन्द्रीय सरकार को हिन्दी प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत आयोजित प्राज्ञ परीक्षा या, जहाँ उस सरकार द्वारा किसी विशिष्ट प्रवर्ग के पदों के संबंध में उस योजना के अंतर्गत कोई निम्न परीक्षा विनिर्दिष्ट है, तब वह परीक्षा उत्तीर्ण कर जी है, या

III. केन्द्रीय सरकार द्वारा उस निर्मित विनिर्दिष्ट कोई अन्या परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है; या

ख) यदि वह इन नियमों के उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषण करता है कि उसने ज्ञान प्राप्त कर लिया है, तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

2) यदि केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यलय में कार्य करने वाले कर्मचारियों में से अस्सी प्रतिशत ने हिन्दी का ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है तो उस कार्यालय के कर्मचारियों के बारे में सामान्यतया यह समझा जाएगा कि उन्होंने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है।

3) केन्द्रीय सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निर्मित-विनिर्दिष्ट कोई अधिकारी यह अवधारित कर सकता है कि केन्द्रीय सककार के किसी कार्यालय के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है या नहीं।

4) केंन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों के कर्मचारयिों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है, उन कार्यालयों के नाम, राजपत्र में अधिसूचित किए जाएँगे।

परन्तु यदि केन्द्रीय सरकार की राय है कि किसी अधिसूचित कार्यालय में काम करने वाले और हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों का प्रतिशत किसी तारीख से उपनियम 2) में विनिर्दिष्ट प्रतिशत से कम हो गया है, तो वह, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकती है कि उक्त कार्याल उस तारीख से अधिसूचित कार्यालय नहीं रह जाएगा।

11) मैन्युअल, संहिताएँ और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, लेखन सामग्री

आदि-1)केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से संबंधित सभी मैन्युअल, संहिताएँ और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषीय रूप में, यथास्थिति, मुद्रित या साइक्लोस्टाइल किया जाएगा और प्रकाशित किया जाएगा।

2) केन्द्रीय सरकार के कसी कार्यालय में प्रयोग किए जाने वाले रजिस्टरों के प्ररूप और राजभाषा अधिनियम और आदर्श शीर्षक हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे।

3) केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग के लिए सभी नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख तथा सामग्री की अन्य मदें हिन्दी और अंग्रेजी में लिखी जाएँगी, मुद्रित या उत्कीर्ण होंगीः

परन्तु यदि केंन्द्रीय सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है तो वह साधारण या विशेष आदेश द्वारा, केन्द्रीय सरकार के किसी कार्यालय को इस नियम के सभी या किन्ही उपबंधों में छूट दे सकती है।

12 अनुपालन का उत्तरदायित्व-1) केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशानिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह-

I. यह सुनिश्चित करे कि अधिनियम और इन नियमों के उपबंधों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है; और

II. इस प्रयोजन के लिए उपर्युक्त और प्रभायकारी जाँच के लिए उपाय करें।

2) केन्द्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबंधों के सम्यक अनुपालक के लिए अपने कर्मचारियों और कार्यालयों को समय-समय पर आवश्यक निदेश जारी कर सकती है।

अभ्यास प्रश्न 1

टिप्पणी कीजिए

1. 343 (1) अनुच्छेद

.....

.....

.....

.....

.....

2. 1967 अधिनियम

.....

.....

.....

.....

.....

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. अनुच्छेद 351 ..... है। (देवनागरी लिपि/हिन्दी भाषा प्रसार/राष्ट्रभाषा)
2. अनुच्छेद 343 (1) का संबंध .....से है। (राजभाषा/राष्ट्रपति आदेश/राज्यपाल से)
3. भारत की राष्ट्रीय लिपि..... है। (देवनागरी/खरोष्ठी/ब्राहमी)
4. संविधान का भाषा संबंधी भाग है। (17/19/21)
5. अनुच्छेद 348 संबंध..... से है। (न्यायालय की भाषा/संसद की भाषा/कार्यालय की भाषा)।

3.5 राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा का प्रश्न

हिन्दी भाषा और संविधान को लेकर कभी-कभी कुछ प्रश्नों से जूझना पड़ता हें उन्हीं प्रश्नों में से एक प्रश्न है- राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा का। हिन्दी को कभी राजभाषा कहा गया तो कभी राष्ट्रभाषा। कभी संपर्क भाषा तो कभी संघभाषा । ये नामकरण दरअसल हिन्दी के व्यापक स्वरूप को ही व्यक्त करते हैं। हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है, इसमें क्या संदेह, लेकिन इस पर यह

कह कर आपत्ति उठायी गई कि ऐसा करने से हिन्दी भाषा को विशेष गौरव मिलेगा, और अन्य भारतीय भाषाएँ बहिष्कृत होंगी। हिन्दी के विरोधीयों ने इस तर्क को उठाया कि राष्ट्र की भाषाएँ तो भारत की अन्य भाषाएँ भी है, फिर हिन्दी को इतना गौरव क्यों? हिन्दी को राष्ट्रभाषा कहने कारणों की तलाश करते हुए देवेन्द्रनाथ शर्मा ने लिखा है कि,''वस्तुतः राष्ट्रभाषा शब्द के प्रयोग का ऐतिहासिक कारण है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा इसलिए नहीं कहा गया हे कि वह राष्ट्र की एकमात्र या सर्वप्रमुख भाषा है, बल्कि इस नाम का प्रयोग अंग्रेजी को ध्यान में रखकर किया गया।'' आगे देवेन्द्रनाथ शर्मा जी ने अपने तर्क को विस्तार देते हुए लिखा है, ''दूसरी बात यह है कि कि सम्पूर्ण राष्ट्र में संचार की कोई भाषा हो सकती है तो हिन्दी। हिन्दी की इस विशेषता को ध्यान में रखकर उसे संविधान ने राजभाषा के रूप में स्वीकृत किया। अतः समग्र राष्ट्र के लिए जो भाषा सर्म्पक स्थापित करने का कार्य कर सके उसे राष्ट्रभाषा कहने में कोई हानि या आपत्ति नहीं है। ये ही कारण है जिनसे हिन्दी को राष्ट्रभाषा की संज्ञा दी जाती है।''

भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकृति मिली हे। अनुच्छेद 343 (1) में हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यात मिली है। संविधान में कहीं भी हिन्दी के लिए राष्ट्रभाषा शब्द का प्रयोग नहीं हे। संवधिान में इसे संघभाषा (Language of the Union) या संघ की राजभाषा (off~icial Language of the Union) कहा गया है। संघभाषा कहने के पीछे भी वही तर्क है कि यह पूरे राष्ट्र को एक साथ बांध सके। वस्तुतः राजभाषा का अर्थ है- राजकाज में प्रयुक्त होने वाली भाषा तथा राष्ट्रभाषा का अर्थ है- किसी राष्ट्र की संवेदनाओं, इच्छाओं को जोड़नेवाली भाषा।

3.6 सारांश

एम.ए.एच.एल. -203 की तीसरी इकाई 'भारतीय संविधान एवं हिन्दी' का आपने अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपने जाना कि-

- अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार हिन्दी संघ की राजभाषा तथा देवनागरी संघ की लिपि होगी।
- राजभाषा के इतिहास का अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि संस्कृत-पालि-प्राकृत-अपभ्रंश-फारसी-अंग्रेजी-हिन्दी का क्रम चला है।
- भारतीय संविधान में प्रारंभ में 15 वर्ष के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रावधान था, जो क्रमशः आगे बढ़ता गया।
- अनुच्छेद1976 के अनुसार हिन्दी भाषा व अन्य प्रादेशिक भाषाओं में सामंनस्य लाने के लिए भारतीय भाषाओं को 'क', 'ख' एवं 'ग' क्षेत्रों में विभक्त कर दिया है।
  'क' हिन्दी भाषी क्षेत्र
  'क' जहाँ हिन्दी द्वितीय भाषा है
  'ख' दक्षिण भारतीय राज्य- अंग्रेजी के साथ मातृभाषा एवं एक प्रति हिन्दी का प्रयोग।

- राजभाषा का आशय राजकाज की भाषा से है तथा राष्ट्रभाषा का तात्पर्य किसी भी राष्ट्र की आकांक्षाओं- संवेदनाओं को अभिव्यक्त करने वाली भाषा से है।

3.7 शब्दावली

- राजभाषा - राजकाज में प्रयुक्त सांवैधानिक भाषा
- राष्ट्रभाषा - देश की संवेदना को सामूहिक अभिव्यक्ति देने वाली भाषा
- विनिर्दिष्ट - लागू करना
- प्राधिकृत - निर्देशित
- अनुच्छेद - संविधान में व्याप्त धाराएँ

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(2)

1. हिन्दी भाषा प्रसार
2. राजभाषा
3. देवनागरी
4. 17
5. न्यायालय की भाषा

3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. राष्ट्रभाषा हिन्दी समस्याएँ और समाधान-शर्मा, देवेन्द्रनाथ, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2010
2. संविधान में हिन्दी - इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मानविकी विद्यापीठ, दिल्ली।

3.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. भाषा विज्ञान हिन्दी भाषा और लिपि:शर्मा, रामकिशोर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2007

3.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा पर टिप्पणी लिखिए।
2. 'संविधान और हिन्दी' विषय पर निबन्ध लिखिए।

इकाई 4 देवनागरी लिपिः उद्भव एवं विकास

4.1 प्रस्तावना
4.2 पाठ का उद्देश्य
4.3 देवनागरी लिपिःउद्भव एवं विकास
4.3.1 लिपि और भाषा का संबंध
4.3.2 लिपि का इतिहास
4.3.3 देवनागरी लिपिः उद्भव एवं विकास
4.4 देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता
4.5 देवनागरी लिपि और मानकीकरण का प्रश्न
4.6 सारांश
4.7 शब्दावली
4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.11 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

लिपि को परिभाषित करते हुए बी. ब्लॉक और जी.एल. ट्रैगर ने कहा है कि- भाषा को दृश्य रूप में स्थायित्व प्रदान करने वाले यादृच्छिक वर्ण- प्रतीकों की परम्परागत व्यवस्था लिपि कहलाती है। (Language is a system of arbitrary Vocal Symbols by means of which a Social group Coooperates)। इस संबंध में डॉ0 अनंत चौधरी ने लिखा है- जिस प्रकार भाषा ध्वनियों की व्यवस्था होती है, उसी प्रकार लिपि वर्णों की। तात्पर्य यह कि भाषा में जिस प्रकार ध्वनि के आश्रय कार्य चलता है, उसी प्रकार लेखन में वर्ण के माध्यम से। मानवता के विकास क्रम में लिपि ने क्रान्तिकारी भूमिका निभाई है, किन्तु भाषा और लिपि के तुलनात्मक स्वरूप पर हम विचार करें तो हम देखते हैं कि भाषा प्राथमिक है और लिपि द्वितीयक। दूसरे बड़ा अंतर यह भी है कि भाषा के बिना किसी मनुष्य का कार्य नहीं चल सकता, किन्तु लिपि के बिना चल सकता है। बहुत से व्यक्ति जो पढ़े-लिख नहीं है, वे भी भाषा व्यवहार करते हैं, क्यों कि भाषा मनुष्यता व सामाजिकता का हेतु हैं। भाषा-कौशल व व्याकरणिक दृष्टि से विचार करें तो भाषा और लिपि के इस संबंध को उच्चारित और लिखित भाषा के माध्यम से इनमें अंतर किया गया है। उच्चरित भाषा का संबंध बोलने और सुनने से है और लिखित भाषा का संबंध पढ़ने

और लिखने से । इस प्रकार भाषा और लिपि का सम्बन्ध भी लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया में विकसित हुआ है।

देवनागरी लिपि, हिन्दी भाषा व अन्य आर्यभाषाओं की लिपि है। अपनी वैज्ञानिक दृष्टि के कारण यह संसार की लिपियों में विशिष्ट स्थान रखनी हे। प्रस्तुत इकाई में हम देवनागरी लिपि की विशेषता व उसके मानकीकरण की समस्या का अध्ययन करेंगे। साथ ही लिपि और वर्ण के अंतर्सम्बन्ध तथा लिपि के इतिहास का भी अध्ययन करेंगे।

4.2 पाठ का उद्देश्य

एम.ए.एच.एल- 203 की यह चौथी इकाई है। यह इकाई देवनागरी लिपि पर आधारित है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- लिपि और भाषा के अंतर्सम्बन्ध को समझ सकेंगे
- लिपि के इतिहास का अध्ययन कर सकेंगे।
- देवनागरी के उद्भव एवं विकास की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
- देवनागरी लिपि के वैज्ञानिक स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।
- देवनागरी लिपि और उनके मानकीकरण के प्रश्न को समझ सकेंगे।

4.3 देवनागरी लिपि: उद्भव एवं विकास

4.3.1 लिपि और भाषा का संबंध

आपने अध्ययन किया कि लिपि, वर्णों की दृश्य रूप में व्यवस्था है। और स्पष्ट रूप में समझे तो यह कि लिपि वर्णों की सुनिश्चित व्यवस्था है, जिस प्रकार वर्ण, ध्वनियों के सुनिश्चित रूप है। लिपि और भाषा के अंतर्सम्बन्ध को भाषा-कौशल के बिन्दुओं से हम और अच्छे प्रकार से समझ सकते हैं। भाषा- कौशल के चार माध्यम हैं- भाषण, श्रवण, लेखन, वाचन,। इनमें दो का संबंध भाषा के उच्चरित रूप से है और दो का सम्बन्ध भाषा के लिखित रूप से/इसे स्पष्टतया हम इस आरेख के माध्यम से समझ सकते हैं।

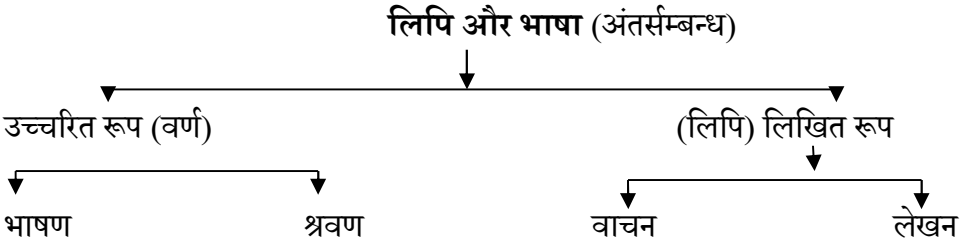

इस प्रकार आपने देखा कि ध्वनियों एवं वर्ण चिह्नों के सम्बन्ध का नाम ही लिपि है। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की पुस्तक 'हिन्दी की भाषिक व्यवस्था और उसका मानक रूप' नामक पुस्तक में लिखा गया है - '' भाषा में ध्वनियों एवं वर्ण चिह्नों के संबंध का नाम लिपि है।

इन्हीं वर्ण चिह्न के परस्पर संयोग से शब्द बनते हैं जिनसे पद, उपवाक्य तथा वाक्य बनाए जाते हैं। जहाँ लिपि भाषिक ध्वनि को वर्ण के रूप में चिह्नित करती है, वहाँ वर्तनी वर्ण विन्यास के रूप में हमारे सामने आती है। वर्ण विन्यास से तात्पर्य है - लिखित शब्द में वर्णों को एक विशेष सार्थक क्रम में रखना। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि किसी भाषा के शब्द में सार्थक ध्वनियों का प्रयोग जिस क्रम से होता है, उस ध्वनिक्रम को उस शब्द की वर्तनी कहा जाता है। किसी भी भाषा को शुद्ध रूप से तभी लिखा जा सकता है, जब सके वर्णों को हम सही-सही पहचाने तथा उनसे बनने वाले शब्दों को सही रूप में लिखें। इस आधार पर लिपि के दो पक्ष हो सकते हैं-

1. ध्वनियों का लेखन (वर्ण-व्यवस्था)
2. शब्दों का लेखन (वर्तनी व्यवस्था)

स्पष्ट है कि भाषा और लिपि गहरे रूप में एक दसूरे से जुड़े हुए हैं। कई बार वाचन (भाषण) को प्राथमिक तथा लेखन को द्वितीयक मान लिया जाता है, जबकि यर्थाथ यह है कि बिना वाचन और लेखन के भाषण और श्रवण भी शुद्ध व परिष्कृत नहीं हो सकता।

4.3.2 लिपि का इतिहास

मनुष्य ने भाषा का आविष्कार कब किया होगा..... उसने अपने भावों को कब लिपिबद्ध किया होगा, यह प्रश्न अभी भी विवादित है। अपनी स्मृति को सुरक्षित करने के क्रम में मनुष्य ने लिपि की खोज की होगी, हम ऐसा अनुमान करते हैं। डॉ. बाबूराम सक्सेना ने इस क्रम परम्परा के ऊपर लिखा है- '' प्रथम सम्पूर्ण बात या वाक्य का बोध कराने वाले चित्र, फिर इन चित्रों से विकसित हुए उनके उद्बोधक संकेत और इनसे अक्षर, लिपि के विकास का यह क्रम रहा। '' डॉ0 उदयनारायण तिवारी ने भी लिखने की कला को चित्र लिपि से माना है और फिर उससे आगे क्रमशः भावलिपि तथा ध्वन्यात्मक अर्थात् अक्षरात्मक एवं वर्णनात्मक लिपि को माना है। डॉ. अनंत चौधरी ने लिपि के विकास की चार अवस्थाएँ स्वीकार की है।- 1 - चित्रलिपि
2- भाव-संकेत-लिपि 3- वर्णात्मक लिपि तथा 4- अक्षरात्मक लिपि। कहीं-कहीं प्रतीक-लिपि को जोड़कर इसकी संख्या को 5 कर दिया जाता है। प्रतीक-लिपि संकेतात्मक थी, इसलिए कुछ अध्येता इसे लिपि के अंतर्गत नहीं मानते। इस दृष्टि से चित्र लिपि को ही प्रारंभिक लिपि से रूप में अधिकांश अध्येताओं ने स्वीकार किया है।

1. **चित्रलिपि** - चित्रलिपि को प्रारंभिक लिपि मानने के पीछे मुख्य तर्क यह है कि संसार के अनेक स्थानों पर प्राप्त प्राचीन शिलाखण्ड, काष्ठपट्टिका, पशु-चर्म एवं भोजपत्रों पर अनेक चित्र उत्कीर्ण रूप में प्राप्त हुए हैं। इन्हीं के आधार पर अध्येताओं ने अनुमान किया कि चित्रलिपि ही आद्य लिपि हो सकती है। इस संबंध में देवेन्द्रनाथ शर्मा ने लिखा है- ''मनुष्य जिस वस्तु को लिपिबद्ध करना चाहता था, उसका चित्र बना देता था''।
2. **भाव-संकेत लिपि** - भाव-संकेत लिपि को दूसरी लिपि के रूप में स्वीकार किया गया है। इस लिपि के विकास के कारणों की व्याख्या करते हुए डॉ. बाबूराम सक्सेना ने कहा है

कि ''चित्रों को खींचना आसान काम न था, समय भी काफी लगता था धीरे-धीरे खराब खिंचे हुए चित्रों से भी काम चलता रहा। होते-होने ये चित्र अपने मूलरूप से बहुत दूर हट आर्ये अब इन संकेतों को देखकर ही मूल चित्रों का उद्बोध होता था और उनके द्वारा उनके भावों का। चित्रों की स्थिति तक, चोह वे कितने भी बुरे खिंचे हुए हो, भावों का उद्बोध अन्य भाषा-भाषियों को भी हो जाता था। पर, अब संकेतों के कारण व्यक्तीकरण उन्हीं तक सीमित रह गया, जो उन संकेतों से अनभिज्ञ थे। चित्र तक तो भाव और चित्र-संकेत में, देखने वालों को एक प्रकार का समवाय सम्बन्ध मालूम देता था, किन्तु अब तो कवेल ऐसा सम्बन्ध रह गया, जो रूढ़ि पर आश्रित था। ''तात्पर्य यह कि इसका संकेत चित्रलिपि की तरह वस्तुओं का प्रतितिधित्व न कर भावों का प्रतिनिधित्व करते थे। इसलिए इसे भाव-संकेत लिपि कहा गया।

3. **वर्णात्मक लिपि** - इस लिपि को ध्वन्यात्क लिपि या ध्वनि लिपि कहा गया है। इस लिपि में भाषा की प्रत्येक ध्वनि के लिकए अलग-अलग वर्ण प्रतीक निश्चित किये गये थे। इस दृष्टि से यह आधुनिक अर्थ में प्रथम लिपि भी कह गई है। डा.उदयनारायण तिवारी ने इस लिपि पर टिप्पणी की है कि,'' इसमें लिपि तथा भाषा एक दूसरे का अंग बन जाती हें और लिपि ही भाषा का प्रतिनिधित्व करने लगती है।''

4. **अक्षरात्मक लिपि** - अक्षरात्मक लिपि, वर्णनात्मक लिपि ही विकसित व वैज्ञानिक रूप हे। डॉ.अनंत चौधरी ने इस लिपि पर टिप्पणी की है कि, '' वर्णनात्मक लिपि के समान इसमें भी प्रत्येक ध्वनि के लिए स्वतंत्र वर्ण तथा स्वर एवं व्यंजन के साथ में नहीं दिखलाया जा सकता। अक्षरात्मक लिपि की यह विशेषता होती है कि इसमें प्रत्येक स्वर की मात्रा तथा उसे सूचित करने वाल स्वतंत्र चिह्न निश्चित होते हैं, जिनके उपयोग से व्यंजन तथा स्वर के युक्त रूपों के एकीकृत का स्वतंत्र वर्णों के रूप में दिखाया जाता है।''

भारतीय लिपियों का इतिहास - भारतीय लिपि के इतिहास की ओर सर्वप्रथम ध्यान विलियम जोन्स के माध्यम से गया। उसके पश्चात् भारतीय लिपि के इतिहास पर काम शुरू हुआ। विवाद इस बात पर हुआ कि विदेश लेखकों ने भारतीय लिपि के इतिहास को ईसा पूर्व 3-4 शताब्दी बताया, जबकि भारतीय लेखकों ने इसे ईसा पूर्व 3,000 के लगभग बताया। भारतीय लिपि इतिहास के विकास को लेकर इतना विवाद रहा है कि सुनिश्चित रूप से कुछ कह सकना मुश्किल हे। भारतीय लिपियों में जो प्रमुख लिपि रही है, उसको देखन उचित होगा।

सैंधव लिपि - भारत की ज्ञात लिपियों में सैंधव लिपि प्रमुख लिपि है। सिन्धु घाटी सम्यता से जुडी होने के कारण ही इसे सैंधव लिपि कहा गया है। इस लिपि को किसी ने 4000 ईसा पूर्व का मान है तो किसी ने 4000 ईसा पूर्व की। सिंधु घाटी में मांटगोमरी जिले के हड़प्पा तथा सिंधु के लरकाना जिले में मोहनजोदडो की खुदाई से कुछ सीलें मिली हैं, जिन पर यह लिपि अंकि है। लेकिन दुर्भाग्य से अभी तक इस लिपि को नहीं पढा जा सका हे। कुछ विद्वानों ने ब्राह्मी लिपि का विकास इसी लिपि से मान है, जिसे हम प्रामाणिक स्त्रोत के अभाव में निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते।

ब्राह्मी लिपि - ब्राह्मी लिपि संबंधी अभिलेख ईसा पूर्व 3 से 5 शताब्दी पूर्व के मिलते हैं। यह लिपि बायीं ओर से दाईं ओर लिखी जाती है। इसके अक्षर प्रायः सीधे होते थे। अधिकांश अक्षरों के अन्त में तथा कुद के प्रारम्भ और अन्त दोनों स्थानों में सीधी रेक्षाएँ जुड़ी होती थीं।

ब्राह्मी अपने युग की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि थी। इसकी लोकप्रियता का एक प्रमाण यह भी है कि बौद्ध एवं जैन धर्म के विद्वानों ने भी इस लिपि को अपनाया। ब्राह्मी लिपि की महत्त्व पर टिप्पणी करते हुए पं0 गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने लिखा है कि- '' मनुष्य की बुद्धि के सबसे बड़े महत्व के दो कार्य, भारतीय ब्राह्मी लिपि हजारों वर्ष पहले भी इतनी उच्चकोटि को पहुँच गयी थी कि उसकी उत्तमता की कुछ भी समानता संसार भर की कोई दूसरी लिपि अब तक नहीं कर सकती ।..... इसमें प्रत्येक आर्यध्वनि के लिए अलग-अलग चिह्न होने से जेसा बोला जावे, वैसा ही लिखा जाता है और जैसा लिखा जावे, वैसा ही पढा़ जाता है तथा वणक्रम वैज्ञानिक रीति से स्थिर किया गया है। यह उत्तमता किसी अन्य लिपि में नहीं है।''

खरोष्ठी लिपि - खरोष्ठी लिपि का शाब्दिक अर्थ हे- गधे के ओंठों के सामन। अर्थात् देखने में भद्दी एवं कुरूप होने के कारण इस लिपि को खरोष्ठी कहा गया । खरोष्ठी के नामकरण के संबंध में भी विवाद हे। कोई इसे खरोष्ठी नामक विद्वान के नाम के कारण खरोष्ठी बताता है, कोई गधे की चमडी़ पर लिखने के कारण तो कोई हिब्रू के, 'खरोशेथ' (लिखावट) से बने खरोठठ शब्द से। अतः निश्चित रूप से कुछ कहना संभव नहीं है।

खरोष्ठी ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में भारत वर्ष के उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश के आस पास पंजाब के गांधार प्रदेश में प्रचलित थी, जो मौर्यवंशी राजाओं के शाहबाजगढी़ और मानसेरा के लेखों से सिद्ध है। खरोष्ठी की तरह दाहिनी ओर से बायीं ओर लिखी जाती थी और इसके ग्यारह वर्ण - क, ज, द, न, ब, य, र, ब, प, ष, और ह समान सामन उच्चारण वाले अरमइक् अक्षरों से मिलते-जुलते हैं।

ब्राह्मी से उद्भूत परवर्ती लिपियाँ - डा0 अनंत चौधरी ने ब्राह्मी से उद्भूत परवर्ती लिपियों को जो क्रम दिया है, उसे हजम इस आरेखा के माध्यम से समझ सकते हैं।

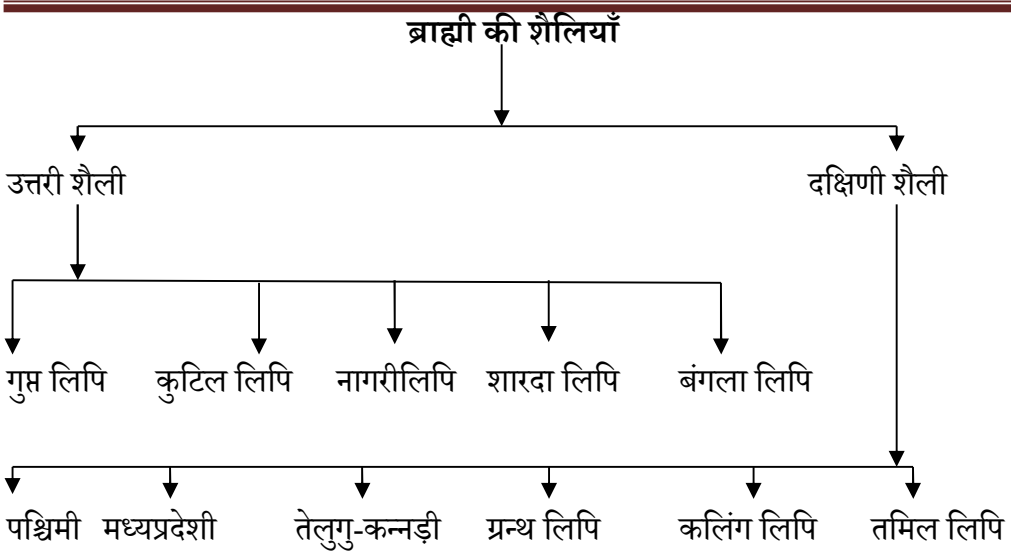

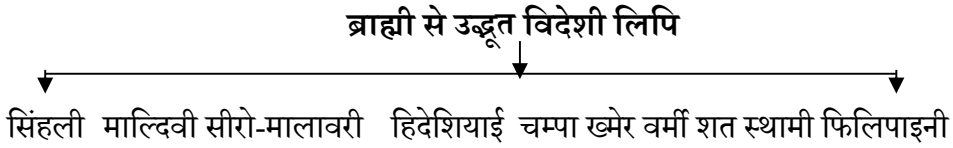

लिपियों के अंतर्सम्बन्ध को और स्पष्ट रूप से लिपि समझने के लिए ब्राह्मी से उद्भूत प्रमुख भारतीय लिपियों के अंतर्सम्बन्ध को देखन उचित होगा।

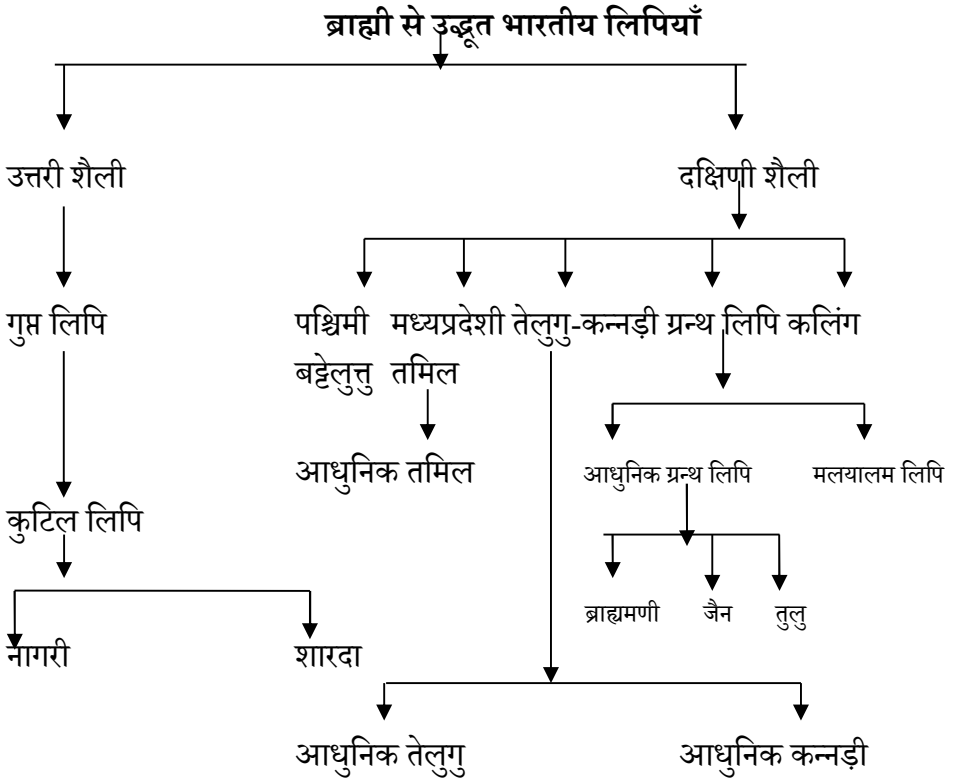

उपर्युक्त ब्राह्मी की उत्तरी शैली से उद्भूत नागरी एवं शारदा शैली का क्रमिक विकास निम्नलिखित रूप से हुआ.

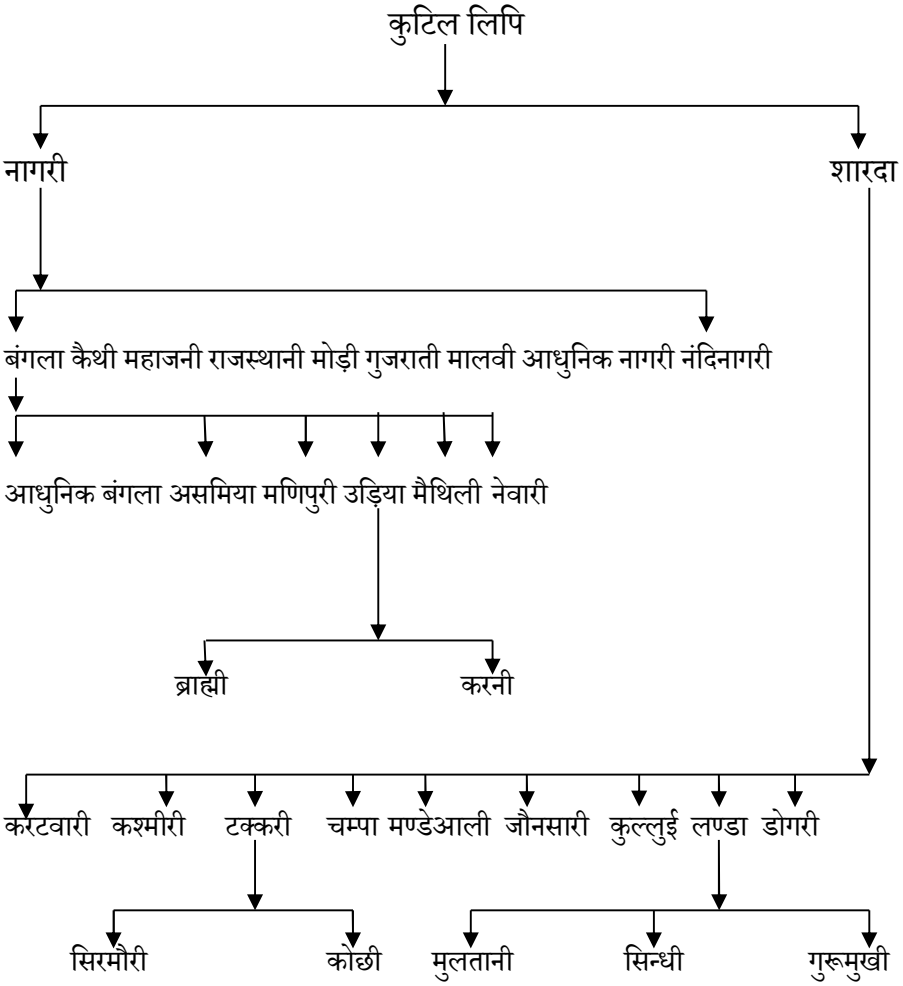

4.3.3 देवनागरी लिपि: उद्भव एवं विकास

देवसनागरी लिपि के कई नाम हैं- नागरी, नागर, देवनागर, लोकनागरी तथा हिनदी लिपि। इसके सभी नामों में नागरी या देवनागरी सर्वाधिक लोक प्रचलित है। देवनागरी संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार संघ की लिपि भी है। इसके नामरकण के विभिन्न तर्क हैं- नागर ब्राह्मणों के कारण नाग लिपि शब्द से, नगरीय प्रयोग के कारण, देवनगर स्थान में प्रयुक्त होने के कारण। इसके नामों के संबंध में कोई एक निश्चित मत नहीं मिलते, इसीलिए डॉ0 धीरेन्द्र शर्मा , डॉ0 बाबूराम सक्सेना ने इस नाम सके लेकर कोई निश्चित मत नहीं प्रकट किया है, लेकिन फिर भी लोक प्रचलन ही दृष्टि से इसे नगरी या साहित्यिक राजभाषीय प्रचलन की दृष्टि से देवनागरी कहा जा सकता है। देवनागरी लिपि के विकास क्र को ब्राह्मी लिपि से सम्बद्ध किया गया है। आइए इसे इस आरेख के माध्यम से समझें।

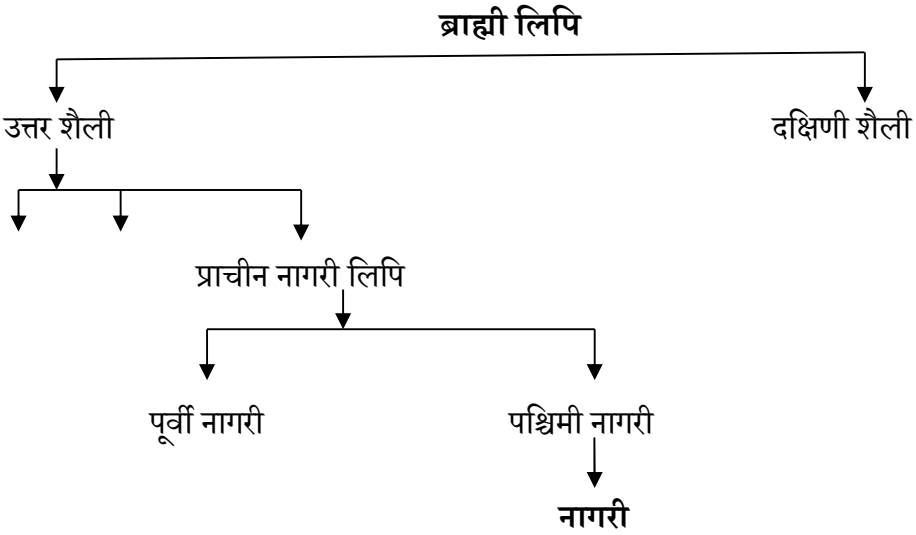

इस प्रकार देवनागरी का सम्बन्ध ब्राह्मीलिपि उत्तरी शैली प्राचीन नागरी लिपि - पश्चिमी नागरी- देवनागर से बैठता है।

अभ्यास प्रश्न 1

(क) टिप्पणी कीजिए।

1. सैंधव लिपि

.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....

2. ब्राह्मी लिपि

.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....

2- रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. वर्णनात्मक लिपि को ..... भी कहा गया है। (ध्वनि/अक्षरात्मक लिपि/ खरोष्ठी लिपि)
2. भारतीय लिपियों में ..... सर्वाधिक प्राचीन है। (ब्राह्मी/सैंधवी/खरोष्ठी)
3. देवनागरी लिपि का विकास..... लिपि से हुआ है। (सैंधव/कुटिल/ ब्राह्मी)
4. खरोष्ठी लिपि का अर्थ ..... है। (गधे के ओंठ/ कुत्ते के ओंठ / घोड़े के ओंठ)
5. ब्राह्मी लिपि की ..... शैलियाँ प्रचलित हुई। (5/2/10)

4.4 देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता

देवनागरी लिपि की विशेषताओं को बताने के क्रम में यह अक़्सर कहा जाता है कि यह वैज्ञानिक लिपि है। प्रश्न यह है कि किसी लिपि को वैज्ञानिकता प्रदान करने वाले कौन से तत्त्व होते हैं? वैज्ञानिकता के आधार तत्व बताते हुए भाषाविदों ने मान है कि वह वैज्ञानिक लिपि हो सकती है जिसमें -

- एक ध्वनि के लिए एक वर्ण हो।
- एक वर्ण एक ही ध्वनि को व्यक्त करें।
- मात्रा एवं वर्णचिह्नों में भिन्नता हो।
- लेखन और उच्चारण में एकरूपता हो।
- सरल एवं स्पष्ट हो
- उच्चारण एवं लेखन में व्यवस्थित हो
- ध्वन्यात्मक दृष्टि से सन्तुलन स्थापित करती हो

तो वैज्ञानिकता के संदर्भ मे उपरोक्त त्वों को क्या देवनागरी लिपि पूर्णतः पालन करनी दिखती है? इस प्रश्न का उत्तर हमें दवनागरी लिपि की विशेषता/गुण देखने के संदर्भ में मिल सकता है, तो आइए हम देवनागरी लिपि को विशेषतओं का अध्ययन करें-

- देवनागरी लिपि अधिक-से-अधिक ध्वनि-चिह्नों से संपन्न है।
- देवनागरी लिपि में स्वर एवं व्यंजन का वर्गीकरण वैज्ञानिक पद्धति से उच्चारण स्थान एवं प्रयत्नों के आधार पर किया गया है।
- देवनागरी लिपि में प्रत्येक लिपि के लिए अलग-अलग स्वतंत्र वर्ण हैं।
- देवनागरी लिपि में वर्णमाला और वर्तनी में उस प्रकार का विभेद नहीं जैसा कि अन्य लिपियों में है। केवल शब्दों का शुद्ध उच्चारण जानने से ही उन्हें शुद्ध रूप से लिखा जा सकता है।

- देवनागरी लिपि की बडी़ विशेषता यह है कि जो लिखा जाता है, वही पढ़ा जाता है और जो पढा़ जाता है, वही लिखा जाता है।
- देवनागरी लिपि, भारत की प्राचीन लिपि है। भारात की कई अन्य भाषाओं (गुजराती, पंजाबी, उर्दू.....आदि) का साहित्य देवनागरी में ही मिलता है। अतः राष्ट्र की सम्वेदना इस लिपि से सहज ही जुड़ जाती है।
- देवनागरी लिपि में प्रत्येक स्वर वर्ण के लिए अलग से स्वतंत्र मात्रा चिह्न निश्चित किये गये हैं। इस कारण स्वरयुक्त व्यंजनों को उच्चारण के अनुरूप ही स्वतंत्र अक्षरों में लिपिबद्ध किया जाता है।
- यह सरल एवं सहज लिपि है।
- इस लिपि में यह व्यवस्था है कि जब किसी व्यंजन को स्वर रहित करके दिखान हो तो उसके नीचे हलन्त का चिह्न लगा दिया जाता है।
- यह किसी एक भाषा का लिपि नहीं है। यह संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, महाराष्ट्री, नेपाली आदि भाषाओं की लिपि है।
- देवनागरी लिपि में प्रत्येक वर्ण का सर्का एक ही उच्चारण में होता है।
- देवनागरी लिपि में रोमन वर्णों के स्थान छोटे-बड़े वर्णों के अलग-अलग रूप की समस्या नहीं है। इस कारण देवनागरी लिपि के लेखन, मुद्रण एवं टंकण की समस्या नहीं होती है।
- देवनागरी लिपि में स्थानीय अनुनासिक ध्वनियों के लिए अलग-अलग स्वतंत्र वर्ण (ङ्, ण्, न्, म्) है, जो संसार की किसी भी लिपि में नहीं पाये जाते ।

4.5 देवनागरी लिपि और मानकीकरण का प्रश्न

देवननागरी लिपि की कतिपय विशेषतओं के बावजूद उसके मानकीकरण के प्रयास भी होते रहे हैं। देवनागरी के विरोध में कुछ तो जानबूझकर भ्रम फैलाया गया, कुछ समयानुरूप उसमें संशोधन भी किय गये। यहाँ देवनागरी लिपि के के संदर्भ में जो आक्षेप किये गये हैं, आइए हम उसका अध्ययन करें।

- देवनागरी में वर्णों की संखा अधिक है, इसलिए इसके टंकण में असुविधा होती है।
- देवनागरी में शिरोरेखा का प्रयोग लेखन के प्रवाह को रोकता है।
- वर्ण साम्य से असुविधा होती है जैस ध/घ, रव/ख या म/भ जैसे वर्णों में।
- संयुक्त वर्ण को समझना मुश्किल हो जाता है जैसे- क्ष (क+ष), त्र (त् +त्र) आदि
- देवनागरी लिपि में एक ही वर्ण के दो-दो रूप प्रचलित हैं जिससे नई विद्यार्थी को असुविधा होती है।

- चन्द्रबिन्दु और अनुसार के प्रयोग में भ्रम है।
- कुछ वैदिक ध्वनियाँ भी चल रही है- ऋ
- देवनागरी लिपि में प्रत्येक स्वर की अलग-अलग मात्रा होती है। जैसे अ (।) इ/ई उ/ऊ आदि।
- मात्रा प्रयोग से लेखन में असुविधा होती है।

इस प्रकार देवनागरी लिपि पर कई आक्षेप लगाये गये हैं, जिनकी समीक्षा आवश्यक है। देवनागरी लिपि पर जो आरोप लगाये गये हैं, वे ज्यादातर भ्रामक हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

(क) सत्य/असत्य का चुनाव कीजिए।

1. नागरीलिपि का संबंध ब्राह्मी की उत्तरी शैली से है।
2. ग्रन्थ लिपि का संबंध ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से है।
3. चम्पा, ब्राह्मी से उद्भूत विदेशी लिपि है।
4. कुटिल लिपि, ब्राह्मी से उद्भूत दक्षिणी शैली की लिपि है।
5. उड़िया, ब्राह्मी से उद्भूत दक्षिणी शैली की लिपि है।

(ख) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. देवनागरी की प्रमुख विशेषता एक ध्वनि के लिए.....वर्ण है। (तीन/दो/एक)
2. लेखन और..... में एकरूपता देवनागरी की विशेषता है। (पाठन/उच्चारण/कौशल)
3. गुजराती भाषा की लिपि..... है। (खरोष्ठी/देवनागरी/कुटिल)
4. महाराष्ट्री की लिपि ..... है। (देवनागरी/ब्राह्मी/गुप्त)
5. र के ..... भेद प्रचलित हैं। (4/3/2)

4.6 सारांश

एम.ए.एच.एल-203 की यह चौथी इकाई है। इस इकाई का आपने अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् जाना कि-

- भाषा के दो रूप प्रचलित हैं- उच्चरित औ लिखित/लिपि का संबंध भाषा के लिखित रूप से है।
- लिपि, वर्णों प्रतीक रूप में व्यवस्थित रूप है। इस प्रकार भाषा में ध्वनियों और वर्ण चिह्नों के संबंध का नाम ही लिपि है।
- लिपियों का विकास मनौवैज्ञानिक पद्धति पर हुआ है। यानी पहले प्रतीकात्मक-चित्रात्मक-वर्णात्मक फिर अक्षरात्मक लिपि का विकास हुआ है।
- भारतीय लिपियों में सैंधव लिपि सर्वाधिक प्राचीन लिपि है। इसके पश्चात् ब्राह्मी, खरोष्ठी, देवनागरी, लिपियों का विकास होता है।

- देवनागरी लिपि, ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित हुई है। यह लिपि वैज्ञानिक गुणों से युक्त है।
- देवनागरी लिपि की विशेषता- एक वर्ण के लिए एक ध्वनि, एक ध्वनि के लिए एक वर्ण, लेखन और उच्चारण में एकरूपता, उच्चारण और लेखन में एकरूपता तथा सरलता एवं स्पष्टता है।

4.7 शब्दावली

- मानकीकरण - किसी भाषा-लिपि में एकरूपता बनाये ररखने का प्रयास।
- लिपि - ध्वनि एवं वर्ण-चिह्नों के व्यवस्थित रूप।
- उद्भूत - पैदा, स्त्रोत
- विभेद - अंतर, अलगाव
- अणुनासिक - ऐसी ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में नाक का प्रयोग हो।

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

2-

1. ध्वनि लिपि
2. सैंधव
3. ब्राह्मी
4. गधे के ओंठ
5. 2

6. अभ्यास प्रश्न 2

(क)

1. सत्य
2. सत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. असत्य

(ख)

1. एक
2. उच्चारण
3. देवनागरी

4. देवनागरी
5. 4

4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. नागरी लिपि और हिन्दी वर्तनी - चौधरी, अनंत, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय द्वितीय संस्करण 1992।
2. लिपि और वर्तनी - इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, अक्ट्बर 2009

4.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. राष्ट्रभाषा हिन्दी समस्याएँ और समाधान - शर्मा, देवन्द्रनाथ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2010।
2. भाषा विज्ञान हिन्दी भाषा और लिपि - शर्मा, राजकिशोर, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,संस्करण 2007

4.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. लिपियों के इतिहास की समीक्षा कीजिए।
2. भारतीय लिपियों के इतिहास को बताइए।
3. देवनागरी लिपि की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

इकाई 5 ध्वनि विज्ञान - 1 (स्वन विज्ञान)

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 ध्वनि के वर्गीकरण के आधार
5.4 ध्वनि का वर्गीकरण
    5.4.1 स्वर ध्वनि
    5.4.2 व्यंजन ध्वनि
    5.4.3 संयुक्त व्यंजन
5.5 ध्वनि परिवर्तन के कारण
    5.5.1 अभ्यंतर कारण
    5.5.2 बाह्य कारण
5.6 ध्वनि परिवर्तन की दिशाएं
5.7 ध्वनि नियम
5.8 सारांश
5.9 पारिभाषिक शब्दावली
5.10 अभ्यास प्रश्न
5.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.12 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

दैनिक जीवन में हम अनेक प्रकार की आवाजों के रूप में तरह-तरह की ध्वनियाँ सुनते रहते हैं जैसे घर में किसी वस्तु के गिरने की ध्वनि, कुत्ते के भौंकने या कौए की काँव-काँव की ध्वनि, रेल की सीटी या कार-मोटर के हार्न की ध्वनि अथवा आकाश में उड़ते हेलीकाप्टर की ध्वनि। इस तरह दैनिक जीवन में 'ध्वनि' शब्द किसी भी वस्तु/प्राणी से उत्पन्न आवाज के लिए प्रयुक्त होता है। भाषा के संदर्भ में ध्वनि का अर्थ सीमित और विशिष्ट है। वह केवल बोलने या उच्चारण से निकली ध्वनि तक सीमित है। इसीलिए भाषाविदों ने उसे 'भाषा ध्वनि' या भाषण ध्वनि(Speech Sound) कहा है। हम यह कह सकते हैं कि 'भाषा ध्वनि वह सीमित ध्वनि है जिसका प्रयोग मात्र भाषा में होता है।'

डॉ भोलानाथ तिवारी के शब्दों में, 'भाषा-ध्वनि भाषा में प्रयुक्त ध्वनि की वह लघुतम इकाई है जिसका उच्चारण (बोलने) और श्रोतव्यता (सुनने) की दृष्टि से स्वतंत्र व्यक्तित्व हो।'भाषा में ध्वनि का अध्ययन 'ध्वनि विज्ञान' में किया जाता है। ध्वनि विज्ञान के लिए अंग्रेजी में फोनोटिक्स और फोनॉलोजी (Phonetics, Phonology) दो शब्द प्रचलित हैं। दोनों का सम्बंध ग्रीक शब्द 'Phone' से है जिसका अर्थ 'ध्वनि' है। फोनोटिक्स और फोनोलोजी में प्रयोग की दृष्टि से थोड़ा अन्तर है। 'फोनोटिक्स' में हम मुख्य रूप से ध्वनि शिक्षा, ध्वनि की परिभाषा, भाषा की विभिन्न ध्वनियाँ, उच्चारण में सहायक अवयव, ध्वनियों के वर्गीकरण, ध्वनि-गुण, ध्वनि की उत्पत्ति और सम्प्रेषण का अध्ययन किया जाता है। 'फोनोलोजी' में भाषा विशेष की ध्वनियों का प्रयोग, इतिहास तथा ध्वनि-परिवर्तन का अध्ययन किया जाता है। भारतीय व्याकरण में ध्वनि विज्ञान का अध्ययन 'शिक्षा शास्त्र' के रूप में प्राचीन काल से ही होता आया है। पाणिनि का 'अष्टाध्यायी' इस विषय का उल्लेखनीय ग्रंथ है। पाणिनि के साथ ही कात्यायन और पतंजलि के नाम सर्वोपरि हैं। 17 वीं शताब्दी में भट्टोज दीक्षित ने 'सिद्धान्त कौमुदी' में स्वर और व्यंजन का सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया। आधुनिक भाषा विज्ञान के भारतीय भाषा विद्वानों यथा - उदय नारायण तिवारी, सुनीति कुमार चटर्जी, बाबूराम सक्सेना, मंगलदेव शास्त्री, भोलानाथ तिवारी, आदि तथा पाश्चात्य भाषाविदों ब्लूम फील्ड, पाइक, स्टीबल, रोबिन्स, ब्लाक ट्रेगर, डैनियल जोन्स आदि ने ध्वनि और स्वनिम विज्ञान के अनेक नए तथ्यों और नियमों पर गम्भीर विवेचन प्रस्तुत किया है। ध्वनि भाषा की लघुतम इकाई है। भाषा का आधार ही ध्वनि है। ध्वनि के अभाव में भाषा निर्मिति की कल्पना करना असम्भव है। भाषा ध्वनि की उत्पत्ति के लिए चार तत्वों की आवश्यकता होती है -

(1) भाव या विचार
(2) विचार अभिव्यक्ति की इच्छा
(3) उच्चारण में प्राणवायु की सहायता
(4) वागवयवों का सही परिचालन

चूंकि भाषा ध्वनि का संवाहक मनुष्य है। अतः ये चारों विशेषताएं मनुष्य में होती हैं। मनुष्य की चेतना से विचार उत्पन्न होते हैं। ये विचार मन के द्वारा गति प्राप्त करते हैं। तत्पश्चात प्राणवायु के द्वारा वागवयवों से नियंत्रित होकर उच्चारित होते हैं। भाषा ध्वनि के उत्पन्न होने की यही प्रक्रिया है

5.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

1. सामान्य ध्वनियों से अलग भाषा ध्वनि का वैशिष्ट्य और उसकी संरचना से परिचित हो सकेंगे।
2 भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से ध्वनि के विभिन्न आयामों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. ध्वनियों के वर्गीकरण के आधार, उनके वर्गीकृत रूप और प्रकृति से अवगत हो सकेंगे।

4. स्वर और व्यंजन ध्वनियों के अन्तर को समझ सकेंगे।
5. भाषा में ध्वनि परिवर्तन के कारण एवं परिवर्तन की दिशाएं जान सकेंगे।
6. ध्वनि परिवर्तन के प्रसिद्ध नियमों को समझ कर यह जान सकेंगे कि भाषा में ध्वनि परिवर्तन किन नियमों के अन्तर्गत होता है।

5.3 ध्वनियों के वर्गीकरण के आधार

ध्वनियों के वर्गीकरण के मुख्यतः तीन आधार माने गये हैं - 1. स्थान 2. प्रयत्न. और 3. करण । इन तीनों आधारों का अपना-अपना विशेष महत्त्व है। इसमें से किसी एक के अभाव में ध्वनि का उत्पन्न होना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। अतः ध्वनि वर्गीकरण के उपर्युक्त तीन आधारों का परिचय प्रासंगिक होगा।

स्थान (Place of Articulation) - ध्वनि का उच्चारण मुख विवर के स्थान विशेष या अंगविशेष से किया जाता है। 'स्थान' वह है, जहाँ भीतर से आती हवा रोककर या किसी अन्य प्रकार से उसमें विकार लाकर ध्वनि उत्पन्न की जाती है। स्थान का भी प्रयत्न की तरह समान रूप से महत्व है। अतः इनके आधार पर भी ध्वनि का वर्गीकरण किया जाता है। स्वर के अग्र, मध्य, पश्च भेद स्थान पर ही आधारित हैं। व्यंजनों में भी ओष्ठ से लेकर स्वर-यंत्र तक अनेक स्थानों पर प्रयत्न होता है। एक ध्वनि के लिए जिस प्रकार कई प्रयत्न अपेक्षित होते हैं, उसी प्रकार कई प्रयत्नों के लिए कई स्थान भी अपेक्षित हैं। यद्यपि व्यावहारिक दृष्टि से प्रायः किसी भी ध्वनि के लिए प्रमुख प्रयत्न और प्रमुख स्थान का ही विचार किया जाता है। जैसे 'च' ध्वनि के लिए प्रमुख स्थान 'तालव्य' और प्रयत्न की दृष्टि से 'स्पर्श संघर्षी' कहा जायेगा। मुख विवर में प्रमुख स्थान ओष्ठ, दाँत, तालु (कठोर व कोमल) अलिजिह्व, उपलिजिह्व, स्वर यंत्र आदि हैं।

प्रयत्न - ध्वनि के उच्चारण के लिए हवा को रोककर जो प्रयास करना पड़ता है, उस क्रिया को प्रयत्न कहते हैं। प्रयत्न दो भेद हैं - अभ्यंतर और बाह्य। अभ्यंतर प्रयत्न को आस्य प्रयत्न भी कहा गया है। 'आस्य' का अर्थ है मुँह। ध्वनि उच्चारण में मुँह के भीतर किया गया प्रयत्न 'अभ्यंतर प्रयत्न' कहा गया। विद्वानों के अनुसार कोमल तालु से ओंठ के बीच में किये गए प्रयत्न अभ्यंतर प्रयत्न के अन्तर्गत आते हैं। विद्वानों ने बाह्य प्रयत्न का सम्बंध स्वरतंत्रियों से माना है। इसके अन्तर्गत घोष-अघोष, अल्पप्राण-महाप्राण, अनुनासिक-निरनुनासिक के लिये किये गए प्रयत्न को माना है। इस सम्बन्ध में यह भी तथ्य जानना आवश्यक है कि किसी भी ध्वनि के उच्चारण के लिए विभिन्न स्थानों पर एक से अधिक प्रयत्नों की आवश्यकता पड़ती है। जैसे 'क' ध्वनि के उच्चारण के लिए स्पर्शीय, अल्प प्राणीय, घोषीय तथा निरानुनासिक - चार प्रयत्न अपेक्षित हैं।

करण(Articular) - करण का प्रयोग ध्वनि उच्चारण में सक्रिय अंग के लिये किया जाता है। जैसे जीभ आदि। स्थान, ध्वनि-उच्चारण का मूल स्थान है तो करण की सहायता से प्रयत्न सम्भव होता है। अतः स्थान और प्रयत्न की तरह 'करण' का भी विशेष महत्व है। (नोट - स्थान और करण के बारे में चित्र सहित विस्तृत विवरण आप अगली इकाई में पढ़ सकेंगे।)

5.4 ध्वनि का वर्गीकरण

ध्वनियों का सबसे प्राचीन और प्रचलित वर्गीकरण स्वर (Vowel)और व्यंजन (Consonent) के रूप में मिलता है। 'स्वर' शब्द 'स्वृ' धातु से बना है जिसका अर्थ ध्वनि करना है। इसी तरह व्यंजन का सम्बंध 'अंज्' धातु से है जिसका अर्थ है जो प्रकट हो। 'स्वर' उन ध्वनियों को कहा गया जिनका उच्चारण बिना किसी अन्य ध्वनि की सहायता से किया जा सकता है और 'व्यंजन' उन ध्वनियों को जिनका उच्चारण स्वरों की सहायता से होता है। आगे चलकर उच्चारण में हवा के प्रवाह के अबाधित या सबाधित होने के आधार पर पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों स्वीट, डैनियल जोन्स आदि ने स्वर व्यंजन को इस प्रकार परिभाषित किया - 'स्वर वह घोष (कभी कभी अघोष भी) ध्वनि है जिसके उच्चारण में हवा मुख-विवर से अबाध गति से निकलती है।' 'व्यंजन वह ध्वनि है जिसके उच्चारण में हवा मुख-विवर से अबाध गति से नहीं निकलने पाती। या तो इसे पूर्ण अवरुद्ध होकर आगे बढ़ना पड़ता है या संकीर्ण मार्ग से घर्षण खाते हुए निकलना पड़ता है।'

कुछ नवीन ध्वनि शास्त्रियों ने 'स्वर' और 'व्यंजन' के लिए नये नाम दिये हैं। जैसे हेफनर ध्वनियों को आक्षरिक (Syllabic) और अनाक्षरिक (Nonsyllabic) दो वर्गों में रखते हैं। 'सिबलिक' स्वर का समानार्थी न होकर भी उसके निकट है। इसी तरह 'नॉनसिबलिक' भी व्यंजन का प्रकृति से भिन्न नहीं है। अतः सर्वमान्य परिभाषा के आधार पर यह कह सकते हैं कि 'स्वर' वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में प्राणवायु मुख-विवर के कंठ, तालु आदि स्थानों से निर्बाध होकर निकलती हो और 'व्यंजन' वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में प्राणवायु मुख-विवर के कंठ, तालु आदि स्थानों से बाधित होकर निकलती हों। कतिपय अपवादों को छोड़कर स्वर-व्यंजन में भिन्नता है जो उनकी विशेषता भी मानी जा सकती है। जैसे -

1. सभी स्वर आक्षरिक होते हैं और सभी व्यंजन अनाक्षरिक।
2. मुखरता की दृष्टि से स्वर अपेक्षाकृत अधिक मुखर होते हैं और व्यंजन कम मुखर होते हैं। आगे हम विस्तार से स्वर और व्यंजन ध्वनियों के वर्गीकरण करते हुए उनकी प्रकृति का अध्ययन करेगें।

5.4.1 स्वर ध्वनियाँ

स्वर ध्वनि की प्रकृति के बारे में हमें बहुत-सी बातें स्पष्ट हो चुकी हैं। अब हम स्वर - ध्वनियों के वर्गीकरण के बारे में चर्चा करेगें। स्वर-ध्वनियों के वर्गीकरण के निम्नलिखित आधार माने गये हैं

1. जीभ का कौन-सा भाग क्रियाशील होता है ? सामान्य रूप से उच्चारण में जीभ का अग्र, मध्य या पश्च भाग सक्रिय होता है। इस आधार पर स्वर ध्वनि के उच्चारण में जीभ का जो भाग (अग्र, मध्य, पश्च) क्रियाशील होता है, उसके आधार पर उसे अग्र स्वर, मध्य स्वर और पश्च स्वर कहते हैं। जैसे जीभ का अग्र भाग इ,ई,ए,ऐ स्वरों के उच्चारण में सहायक होता है। अतः ये इ,ई,ए,ऐ अग्र स्वर हैं। इसी प्रकार जीभ का मध्य भाग अ स्वर तथा पश्च भाग उ,ऊ,ओ,औ स्वर के उच्चारण में क्रियाशील होता है। अतः अ मध्य स्वर तथा आ,उ,ऊ,ओ,औ पश्च स्वर हैं।

2. जीभ का क्रियाशील भाग कितना ऊपर उठता है ? स्वरों का स्वरूप जीभ के अग्र, पश्च या मध्य भाग के उठने पर भी निर्भर करता है अर्थात यदि जीभ का विशिष्ट भाग बहुत उठा हो तो मुख-विवर अत्यंत संकरा अर्थात 'संवृत' होगा और यदि वह नहीं के बराबर उठा तो मुख-विवर बहुत खुला या 'विवृत' होगा। इन दोनों के बीच 'अर्द्ध विवृत' और 'अर्द्ध संवृत' दो स्थितियाँ और होती हैं। हिन्दी में आ विवृत, ऑ अर्द्धविवृत, ए,ऐ,ओ,औ अर्द्धसंवृत और इ,ई,उ,ऊ संवृत स्वर हैं।

3. ओष्ठ की स्थिति - प्रत्येक स्वर के उच्चारण में जीभ के साथ ओष्ठों की भी भूमिका होती है। स्वरों के उच्चारण के समय ओष्ठों की दो प्रमुख स्थितियाँ हैं - वृताकार और अवृताकार। ओष्ठ गोल आकार में बनने पर उ,ऊ,ओ तथा औ का वृताकार उच्चारण होता है तथा शेष स्वर अवृताकार होते हैं। कुछ स्वरों में ओष्ठ पूर्ण विस्तृत (ए), उदासीन (अ), स्वल्प वृताकार (ऑ) एवं पूर्ण वृताकार (ऊ) होते हैं।

4. मात्रा - स्वर के उच्चारण में जितना समय लगता है, उसे 'मात्रा' कहते हैं। उच्चारण काल के आधार पर स्वरों के तीन भेद हैं - ह्रस्व और दीर्घ। ह्रस्व स्वर के उच्चारण में कम समय लगता है और दीर्घ स्वर के उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक। अ,इ,उ,ए,ओ ह्रस्व स्वर हैं। इसी प्रकार आ,ई,ऊ,ऐ,औ दीर्घ स्वर हैं।

5. कोमल तालु और कौवे का स्थिति - उच्चारण के समय कोमल तालु और कौवा कभी तो नासिका मार्ग को रोक देते हैं, कभी मध्य में रहते हैं जिससे वायु मुख से या नासिका मार्ग से निकलती है। पहली स्थिति में मौखिक स्वर अ,आ,ए आदि तथा दूसरी स्थिति में अनुनासिक स्वर अँ,आँ,इँ उच्चारित होते हैं।

6. स्वरतंत्रियों की स्थिति - उच्चारण के समय स्वरतंत्रियों की स्थिति के आधार पर स्वर घोष और अघोष कहलाते हैं। घोष उन ध्वनियों को कहते हैं जिनके उच्चारण में स्वरतंत्रियों के बीच से आती हवा घर्षण करते हुए निकलती है। प्रायः सभी स्वर घोष की श्रेणी में आते हैं। जब स्वर तंत्रियाँ खुली रहती है तब हवा बिना किसी घर्षण के बाहर निकलती है। यह स्थिति अघोष कहलाती है।

7. मुख की मांसपेशियों या अन्य वागवयवों की दृढ़ता या शिथिलता के आधार पर भी स्वरों के भेद किये गये हैं। जैसे - अ, इ, उ शिथिल स्वर हैं और ई, ऊ, दृढ़ स्वर।

8. कुछ स्वर मूल होते हैं अर्थात उनके उच्चारण में जीभ एक स्थान पर रहती है, जैसे अ, इ, ए, ओ। इसके सापेक्ष कुछ स्वर संयुक्त होते हैं अर्थात इनके उच्चारण में जीभ एक स्वर के उच्चारण से दूसरे स्वर के उच्चारण की ओर चलती है। वस्तुतः संयुक्त स्वर दो स्वरों का ऐसा मिला-जुला रूप है जिसमें दोनों अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व खोकर एकाकार हो जाते हैं और साँस के एक झटके में उच्चरित होते हैं। दोनों मिलकर एक स्वर जैसे हो जाते हैं। ऐ (अ,ए) औ (अ,ओ) संयुक्त स्वर कहे गये हैं। संक्षेप में विभिन्न आधारों पर स्वरों के वर्गीकरण को निम्नलिखित तालिका से अच्छी तरह समझा जा सकता है।

तालिका - 1 स्वर ध्वनियाँ

स्वर	उच्चारण स्थान से	उच्चारण काल से	जिह्वा की सक्रियता से	मुखविवर के खुलने से	होंठों की आवृत्ति से
अ	कंठ्य	ह्रस्व	मध्य	अर्धसंवृत	अवृत्ताकार
आ	कंठ्य	दीर्घ	पश्च	विवृत	अवृत्ताकार
ऑ	कंठ्य	दीर्घ	पश्च	विवृत	वृत्ताकार
इ	तालव्य	ह्रस्व	अग्र	संवृत	अवृत्ताकार
ई	तालव्य	दीर्घ	अग्र	संवृत	अवृत्ताकार
उ	ओष्ठ्य	ह्रस्व	पश्च	संवृत	वृत्ताकार
ऊ	ओष्ठ्य	दीर्घ	पश्च	संवृत	वृत्ताकार
ऋ	मूर्धन्य	ह्रस्व	अग्र	संवृत	अवृत्ताकार
ए	कंठतालव्य	दीर्घ	अग्र	अर्धसंवृत	अवृत्ताकार
ऐ	कंठतालव्य	दीर्घ	अग्र	अर्धविवृत	अवृत्ताकार
ए	कंठतालव्य	ह्रस्व	अग्र	अर्धसंवृत	अवृत्ताकार
ओ	कंठोष्ठ्य	दीर्घ	पश्च	अर्धसंवृत	वृत्ताकार
औ	कंठोष्ठ्य	दीर्घ	पश्च	अर्धविवृत	वृत्ताकार
ओ	कंठोष्ठ्य	ह्रस्व	पश्च	अर्धसंवृत	वृत्ताकार

नोट - ए और ओ की गणना ह्रस्व स्वर में भी होती है।

5.4.2 व्यंजन ध्वनियाँ

व्यंजन की परिभाषा से हम पहले ही परिचित हैं। हमें ज्ञात है कि व्यंजन ध्वनियों की प्रकृति स्वर ध्वनियों से भिन्न है। अतः व्यंजन के वर्गीकरण में स्थान, करण, प्रयत्न के अतिरिक्त स्वरतंत्री प्राणतत्व, उच्चारण शक्ति, अनुनासिकता आदि आधारों पर भी विचार करने की आवश्यकता है। इस प्रकार व्यंजनों के वर्गीकरण में निम्नलिखित आधार पर विस्तृत अध्ययन किया जा सकता है -

(क) स्थान के आधार पर - स्थान के आधार पर व्यंजन ध्वनियों के कंठ्य (कोमल तालव्य), मूर्धन्य, तालव्य (कठोर तालव्य) वर्त्स्य, दंत्य, दंत्योष्ठ्य, ओष्ठ्य, अलिजिह्वीय, काकाल्य आदि भेद होते हैं। इन भेदों तथा इनके अन्तर्गत आने वाली व्यंजन ध्वनियों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है -

1. कंठ्य (Soft Palatal) - इसे 'कोमल तालव्य' भी कहते हैं। जीभ के पिछले भाग के सहारे ये ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। कवर्ग की ध्वनियाँ - क,ख,ग,घ,ङ कंठ्य या कोमल तालव्य की ध्वनियाँ हैं। फारसी की ख़,ग जैसी संघर्षी ध्वनियाँ भी यहीं से उच्चारित होती हैं।

2. तालव्य (Palatal) - इन ध्वनियों का उच्चारण कठोर तालव्य से होता है। जीभ का अगला भाग या नोक इसमें सहायक होती है। च वर्ग की ध्वनियाँ - च्, छ्, ज्, झ् इसी के अन्तर्गत आती हैं।

3. मूर्धन्य (Cevebral) - मूर्द्धा की सहायता से उच्चारण की जाने वाली ध्वनियाँ मूर्धन्य कहलाती हैं। ट्, ठ्, ड्, ढ्, ण् अर्थात ट वर्ग की ध्वनियाँ मूर्धन्य हैं।

4. वर्त्स्य (Alveolar) - मसूढ़े या वर्त्स और जीभ के अगले भाग की सहायता से उत्पन्न ध्वनियाँ वर्त्स्य कहलाती हैं। र्, ल्, स् तथा ज़ फारसी की वर्त्स्य ध्वनियाँ हैं।

5. दंत्य (Dental) - दाँत की सहायता से उत्पन्न ध्वनियाँ दंत्य हैं। इसके उच्चारण में जीभ की नोक भी सहायक होती है। त्, थ्, द्, ध् दंत्य ध्वनियाँ हैं।

6. दंत्योष्ठ्य (Labiodental) - जिन ध्वनियों का उच्चारण ऊपर के दाँत और नीचे के ओंठ की सहायता से होता है, वे दंत्योष्ठ्य कहलाती हैं। व् दंत्योष्ठ्य ध्वनि है।

7. ओष्ठ्य (Bilabial) - दोनों ओंठ से उच्चारित होने वाली ध्वनियाँ ओष्ठ्य होती हैं। पवर्ग में प्, फ्, ब्, भ्, म् ओष्ठ्य ध्वनियाँ हैं।

8. अलिजिह्वीय (Uvular) - इसे जिह्वामूलीय या जिह्वापश्चार्य भी कहते हैं। इसमें कौवे या अलिजिह्व से ध्वनि का उच्चारण होता है। इसके लिए जिह्वामूल या जिह्वापश्च को निकट ले जाकर वायुमार्ग संकरा करते हैं जिससे संघर्षी ध्वनि उत्पन्न होती है। फारसी की क़, ख़, ग़ ध्वनि भी इसी प्रकार की है।

9. काकल्य (Lavygeal) - ये स्वरयंत्र मुख से उत्पन्न होने वाली ध्वनियाँ हैं। इसे 'उरस्य' भी कहते हैं। ह और विसर्ग (:) इसी वर्ग की ध्वनि हैं।

(ख) प्रयत्न के आधार पर - प्रयत्न के आधार पर ध्वनियों के निम्नलिखित वर्ग हैं -

1.स्पर्श (Explosive) - इसे 'स्फोट' या 'स्फोटक' भी कहते हैं। इसके उच्चारण में दो अंग (जैसे दोनों ओंठ या नीचे का ओंठ और ऊपर के दाँत, या जीभ की नोक और दाँत, या जीभ का पिछला भाग और कोमल तालु) एक दूसरे का स्पर्श करके हवा को रोकते हैं और फिर एक दूसरे से हटकर हवा को जाने देते हैं। स्पर्श ध्वनि का उच्चारण कभी तो पूर्ण होता है, कभी अपूर्ण। हिन्दी की कवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग की ध्वनियों के साथ ही फारसी का क ध्वनि स्पर्शीय है।

2. संघर्षी - संघर्षी ध्वनि में स्पर्श की तरह हवा का न तो पूर्ण अवरोध होता है और न ही स्वरों की भाँति वह अबाध रूप से मुँह से निकल जाती है। अतः इसकी स्थिति स्वरों और स्पर्श के बीच की है अर्थात दो अंग एक दूसरे के इतने समीप आ जाते हैं कि हवा दोनों के बीच घर्षण करके निकलती है। इसलिए इसे संघर्षी कहा जाता है। हिन्दी की श्, स्, ष् तथा फारसी की फ़, व़, ज़, ख़, ग़ संघर्षी ध्वनियाँ हैं।

3. स्पर्श संघर्षी (ffAricate) - जिन ध्वनियों के उच्चारण का आरम्भ स्पर्श से हो किन्तु हवा कुछ देर घर्षण के साथ निकले, वे स्पर्श संघर्षी कहलाती है। च्, छ्, ज्, झ् स्पर्श संघर्षी ध्वनियाँ हैं।

4. नासिक्य (Nasal) - इन ध्वनियों के उच्चारण में मुख-विवर के दो अंगों (स्पर्श की तरह) के स्पर्श के साथ हवा नाक के रास्ते बाहर निकलती है। इन्हें 'अनुनासिक' भी कहते हैं। हिन्दी में ङ, ण, न, में नासिक्य व्यंजन हैं।

5. पार्श्विक (Lateral) - इसमें मुख-विवर के मध्य में कहीं भी दो अंगों के सहारे हवा अवरुद्ध कर देते हैं। फलतः हवा दोनों पार्श्वों से निकलती है। इसे 'पार्श्व ध्वनि' भी कहते हैं। ल पार्श्विक व्यंजन है।

6. लुंठित (Rolled) - इसमें जीभ की नोंक को बेलन की तरह कुछ लपेट कर तालु का स्पर्श कराते हुए ध्वनि का उच्चारण होता है। इसे 'लोड़ित' भी कहते हैं। र् लुंठित व्यंजन है।

7. उत्क्षिप्त (Flapped) - जीभ की नोंक को उलटकर तालु को झटके से मार उसे फिर सीधा कर लेने से उत्क्षिप्त ध्वनि उच्चारित होती है। ड़, ढ़ उत्क्षिप्त व्यंजन ध्वनि हैं।

8. अर्द्धस्वर (Semi Vowel) - ये एक प्रकार से स्वर और व्यंजन के बीच की ध्वनियाँ हैं किन्तु ये स्वर की तुलना में कम मुखर हैं, कम मात्रा वाली हैं। चूँकि इन ध्वनियों का उच्चारण का आरम्भ स्वर ध्वनि जैसा होता है, इसलिए इन्हें अर्द्धस्वर ध्वनि कहा जाता है। य्, व् इसी कोटि की ध्वनि हैं।

(ग) स्वर तंत्रियों के आधार पर - इस आधार पर व्यंजन ध्वनियाँ के दो प्रमुख भेद हैं -

1. घोष - ये वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में स्वरतंत्रियों के निकट आ जाने से उसके बीच निकलती हवा से उसमें कम्पन होता है। हिन्दी में कवर्ग सहित पाँच वर्गों की अन्तिम तीन ध्वनियाँ ग्, घ्, ङ्, ज्, झ्, ल् आदि तथा य्, र्, ल्, व्, ह्, ड्, ढ् आदि घोष हैं।

2. अघोष - अघोष ध्वनियों के उच्चारण में स्वर तंत्रियों में कम्पन नहीं होता। हिन्दी में पाँचों वर्ग की प्रथम दो ध्वनियाँ (क्, ख्, च्, छ्, ट्, ठ्, प्, फ् आदि) तथा स्, श् अघोष हैं।

(घ) प्राणतत्व के आधार पर - प्राण का अर्थ है, उच्चारण में लगने वाली हवा या हवा की शक्ति। जिन व्यंजनों के उच्चारण में हवा की अधिकता या श्वास-बल अधिक हो, उन्हें 'महाप्राण' और जिनमें कम हो उसे 'अल्पप्राण' कहते हैं। प्राणतत्व के आधार पर हिन्दी में व्यंजन ध्वनियाँ इस प्रकार हैं -

अल्पप्राण - क, ग, ङ, च, ज, ल, ´, ट, ड, ण, त, द, न, प, ब, म, ल, र, ड़

महाप्राण - ख, घ, छ, झ, ठ, ढ़, थ, ध, फ, भ,

5.4.3 संयुक्त व्यंजन

दो या दो से अधिक व्यंजन से मिलकर बने व्यंजन को संयुक्त व्यंजन कहते हैं। मिलने वाले यदि दोनों व्यंजन एक हैं (जैसे च् + च् = कच्चा) तो इसे दीर्घ या द्वित्व व्यंजन (Double Consonent) कहते हैं किन्तु यदि दोनों भिन्न-भिन्न (जैसे र् + द् = सर्दी) तो उसे संयुक्त व्यंजन (Compund Consonent) कहते हैं। डॉ भोलानाथ तिवारी ने संयुक्त व्यंजन के दो भेद किए हैं - स्पर्श और स्पर्श संघर्षी या पूर्ण बाधा वाले तथा अन्य। इनके बारे में उनका मत है कि, 'संयुक्त व्यंजन दो या दो से अधिक व्यंजनों के मिलने से बनते हैं। मिलने वाले दोनों व्यंजन यदि एक हैं

(जैसे क् + क्, पक्का) तो उस युक्त व्यंजन को दीर्घ या द्वित व्यंजन (long or double consonent) कहते हैं, किन्तु यदि दोनों दो हैं (जैसे र् + म्, गर्मी) तो सयुक्त व्यंजन (compund consonent) कहते हैं। एक दृष्टि से व्यंजन के दो भेद किये जा सकते हैं: स्पर्श और स्पर्श संघर्षी या पूर्ण बाधा वाले तथा अन्य। स्पर्श और स्पर्श संघर्षी के द्वित्त्व में ऐसा होता है कि उसमें स्पर्श की प्रथम (हवा के आने और स्पर्श होने) और अन्तिम या तृतीय (उन्मोचन या स्फोट) स्थिति में तो कोई अंतर नहीं आता केवल दूसरी या अवरोध की स्थिति बड़ी हो जाती है। 'पक्का' में वस्तुतः दो 'क्' नहीं उच्चारित होते, अपितु 'क्' के मध्य की स्थिति अपेक्षाकृत बड़ी हो जाती है। इसलिए वैज्ञानिक दृष्टि से इस प्रकार के द्वित्त्वों की 'दो क्' आदि न कह कर 'क' का दीर्घ रूप या 'दीर्घ व्यंजन क' या दीर्घ या प्रलम्बित 'क' कहना अधिक समीचीन है, क्योंकि दो 'क' तब कहलाते, जब दोनों की तीन-तीन स्थितियाँ घटित होतीं। स्पर्श संघर्षी 'च' आदि व्यंजनों के सम्बन्ध में भी यही स्थिति है। इस प्रकार बग्गी, बच्चा, लज्जा, भट्टी, अड्डा, पत्ती, गद्दी, थप्पड़, अप्पा आदि सभी के द्वित्त्व ऐसे ही हैं। महाप्राणों के इस रूप में द्वित्त्व नहीं होता। वस्तुतः (अन्य दृष्टियों में से एक) अल्पप्राण और महाप्राण ध्वनियों का अन्तर स्फोट के वायु:प्रवाह की कमी-बेशी के कारण होता है। अतः जब दो मिलेंगे तो पहले का स्फोट होगा नहीं, इस प्रकार वह अल्पप्राण हो जायगा। आशय यह है कि ख्ख, घ्घ, छ्छ, झ्झ, ठ्ठ, भ्भ आदि का उच्चारण हो ही नहीं सकता। उच्चारण में ये क्ख, ग्घ, ज्झ, ड्ढ, ब्भ हो जायेंगे, जैसे घग्घर, मच्छर, झज्झर, भब्भड़ आदि। अन्य प्रायः सभी व्यंजनों के द्वित्त्व में इस प्रकार की कोई बात नहीं होती, केवल उनकी दीर्घता बढ़ जाती है, जैसे – पन्ना, अम्मा, रस्सा, बर्रे, पिल्ला आदि।'

विभिन्न आधारों पर व्यंजन ध्वनियों के वर्गीकरण के विस्तृत अध्ययन से आप व्यंजन ध्वनियों की उच्चारण प्रकृति के बारे में अच्छी तरह से परिचित हो गये होंगे। स्मरण की सुविधा की दृष्टि से व्यंजन ध्वनियों का वर्गीकरण निम्नलिखित तालिका में संक्षेप में दिया जा रहा है -

तालिका - 2 व्यंजन ध्वनियाँ

व्यंजन वर्ण	स्थान के अनुसार	प्राण के अनुसार	घोष के अनुसार	विशेष
क्	कंठ्य	अल्पप्राण	अघोष	स्पर्श
ख्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
ग्	‘‘	अल्पप्राण	घोष	‘‘
घ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
ङ्	‘‘	अल्पप्राण	‘‘	स्पर्श तथा नासिक्य
च्	तालव्य	‘‘	अघोष	स्पर्श-संघर्षी
ज्	‘‘	अल्पप्राण	घोष	‘‘

व्यंजन वर्ण	स्थान के अनुसार	प्राण के अनुसार	घोष के अनुसार	विशेष
झ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
ञ्	‘‘	अल्पप्राण	‘‘	स्पर्श नासिक्य
ट्	मूर्धन्य	‘‘	अघोष	स्पर्श
ठ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
ड्	मूर्धन्य	अल्पप्राण	घोष	स्पर्श
ढ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
ण्	‘‘	अल्पप्राण	‘‘	स्पर्श नासिक्य
त्	दंत्यवर्त्स्य-	‘‘	अघोष	स्पर्श
थ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
द्	‘‘	अल्पप्राण	घोष	‘‘
ध्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
न्	‘‘	अल्पप्राण	‘‘	स्पर्श नासिक्य
प्	ओष्ठ्य	‘‘	अघोष	स्पर्श
फ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
ब्	‘‘	अल्पप्राण	घोष	‘‘
भ्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘
म्	‘‘	‘‘	‘‘	स्पर्श नासिक्य
य्	तालव्य	अल्पप्राण	‘‘	अंतःस्थ
र्	वर्त्स्य	‘‘	‘‘	प्रकम्पी
ल्	‘‘	‘‘	‘‘	पार्श्विक
व्	I. दंत्योष्ठ् II. द्वयोष्ठ्य	‘‘ ‘‘	‘‘ ‘‘	अंतःस्थ ‘‘
श्	तालव्य	महाप्राण	अघोष	संघर्षी
ष्	‘‘ (मूलतः मूर्धन्य)	‘‘ ‘‘	‘‘ ‘‘	‘‘ ‘‘
स्	वर्त्स्य	‘‘	‘‘	‘‘

व्यंजन वर्ण	स्थान के अनुसार	प्राण के अनुसार	घोष के अनुसार	विशेष
ह्	कंठ्य	‘‘	घोष	‘‘
ड़्	मूर्धन्य	अल्पप्राण	‘‘	उत्क्षिप्त
ढ़्	‘‘	महाप्राण	‘‘	‘‘

5.5 ध्वनि परिवर्तन के कारण

परिवर्तन इस सृष्टि की विशेषता है। सृष्टि के सभी जड़-चेतन पदार्थ काल क्रम के प्रवाह में परिवर्तित होते रहते हैं। भाषा मनुष्य के विचार-अभिव्यक्ति की संवाहक है। अतः देश-काल के अनुसार उसमें भी परिवर्तन होना स्वाभाविक है। भाषा-परिवर्तन को भाषा का विकास भी माना जाता है। जैसा कि आप जानते हैं कि भाषा सार्थक ध्वनियों का समूह है। अतः ध्वनि-परिवर्तन ही भाषागत परिवर्तन के रूप में दृष्टिगत होता है। भाषा की ध्वनियों में परिवर्तन एक सतत प्रक्रिया है जो भाषा के जन्म से अबाध रूप से घटित होती रहती है। इस क्रम में अनेक ध्वनियाँ लुप्त हो जाती हैं, नई ध्वनियाँ आती हैं अथवा ध्वनियों का परिवर्तित रूप (विकृत रूप) प्रचलित हो जाता है। ध्वनि-परिवर्तन के माध्यम से भाषा के विकास का यह क्रम स्वाभाविक गति से अनवरत चलता रहता है। भाषा में ध्वनि-परिवर्तन प्रमुखतः दो कारणों से होता है –

1. आभ्यंतर कारण 2. बाह्य कारण। इसके अन्तर्गत ध्वनि परिवर्तन कैसे और किस रूप में होता है, इसका अब हम सोदाहरण अध्ययन करेंगे।

5.5.1 अभ्यंतर कारण

ध्वनि परिवर्तन के अभ्यंतर कारण इस प्रकार हैं -

1. मुख सुख - मुख-सुख का अर्थ है - उच्चारण की सुविधा। उच्चारण की सुविधा के लिए ध्वनि परिवर्तन कई प्रकार से होता है। जैसे -

I. कठिन ध्वनि को छोड़कर उच्चारण करना। अंग्रेजी के कई शब्दों में कुछ ध्वनियों का उच्चारण कठिनता के कारण किया ही नहीं जाता। जैसे - श्रनकहम - जज, ज्ञदपमि - नाइफ, ज्ञदवू - नो आदि।

II. नई ध्वनि को जोड़कर उच्चारण सरल करना। जैसे स्टेशन का इस्टेशन या सटेशन।

III. ध्वनियों का स्थान परिवर्तित करना। जैसे चिह्न से चिन्ह, ब्राह्मण से ब्राम्हण।

IV. ध्वनियों को काँट-छाँट कर छोटा करना। जैसे - सपत्नी से सौत या अध्यापक से झा आदि।

2. अनुकरण की पूर्णता - भाषा अनुकरण से ही सीखी जाती है। यदि अज्ञानवश अनुकरण सही या पूर्ण नहीं होता तो उच्चारण में ध्वनि-परिवर्तन हो जाता है। जैसे स्टेशन का इस्टेशन, स्कूल का इस्कूल या सकूल आदि।

3. प्रयत्न लाघव - प्रयत्न लाघव का अर्थ है उच्चारण सुविधा के लिए कम प्रयत्न करना। इसे मनुष्य की लघुकरण की प्रवृत्ति भी माना जा सकता है कि लम्बे-लम्बे शब्दों को छोटा रूप देकर बोलता है। जैसे - उपाध्याय, ओझा बन गया और बाद में झा ही रह गया। अनेक संस्थाओं के लम्बे-लम्बे नाम का संक्षिप्त उच्चारण रूप भी बहुत प्रचलित हो गये हैं। जैसे - जनवादी लेखक का जलेस, भारत - यूरोपीय का भारोपीय, शुक्ल-दिवस का सुदी आदि।

4. अशिक्षा - अशिक्षा और अज्ञान के कारण भी शब्दों का सही उच्चारण नहीं होता, फलतः ध्वनि परिवर्तन होता है। जैसे गोस्वामी का गोंसाई, साधु का साहू आदि।

5. शीघ्रता - कभी - कभी शब्दों का जल्दबाजी में उच्चारण से ध्वनि परिवर्तन होता है। जैसे उन्होने का उन्ने, किसने का किन्ने, अब ही का अभी, तब ही का तभी, या तब्भी आदि।

6. बलाघात - जैसे बली व्यक्ति के समक्ष कमजोर व्यक्ति टिक नहीं पाता, वैसे ही अधिक बलाघात वाली ध्वनि कम बलाघात वाली ध्वनि को उच्चारण से बाहर कर देती है। जैसे अभ्यंतर का भीतर, उपरि का पर, बाजार का बजार, आलोचना का अलोचना आदि।

7. सादृश्य - किसी दूसरे शब्द की ध्वनियों की समानता को लेकर भी ध्वनि परिवर्तन होता है। जैसे - पिंगला के सादृश्य से इड़ा का इंगला, देहाती के सादृश्य पर शहराती आदि।

8. भावावेश - अत्यधिक भावावेश में प्रायः शब्दों की ध्वनियाँ बदल जाती हैं। जैसे बच्चा का बच्चू या बचऊ, चाचा का चच्चा या चच्चू, राधा का राधे, कृष्ण का कान्हा, कन्हैया आदि।

5.5.2 बाह्य कारण

ध्वनि परिवर्तन के बाह्य कारण निम्नलिखित हैं -

1. भौगोलिक प्रभाव - भौगोलिक भिन्नता से उच्चारण में भिन्नता आना स्वाभाविक है। भारत में अनेक भूभाग से लोग आए। उनके उच्चारण में भिन्नता रही। फलतः सिंधु का हिंदु, सप्ताह का हफ्ता प्रचलित हुआ।

2. सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियाँ - क्षेत्र विशेष की सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियाँ भाषा को भी प्रभावित करती हैं। उन्नत समाज प्रायः तत्सम भाषा का प्रयोग करता। भाषा में बढ़ती तद्भव प्रकृति भी विशेष सामाजिक-राजनीतिक अवस्था और व्यवस्था की अभिव्यक्ति करती है। वाराणसी का बनारस होना या दिल्ली का देहली होना अथवा कलिकाता का कलकत्ता और पुनः कोलकाता होना विभिन्न सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों की देन है।

3. विभिन्न भाषाओं का प्रभाव - भारत में फारसी, पुर्तगाली, फ्रेंच, अंग्रेजी आदि अनेक भाषा - भाषी देशों के लोग आये जिनके सम्पर्क से हिन्दी भाषा भी प्रभावित हुई। इसके साथ देश की ही क्षेत्रीय भाषाओं बंगला, गुजराती, मराठी व दक्षिण भारत की भाषाओं का भी प्रभाव पड़ा। अंग्रजी के प्रभाव से अशोक का अशोका, मिश्र का मिश्रा, गुप्त का गुप्ता होना या रिर्पोट का रपट इसका उदाहरण है।

4. कविता में मात्रा, तुकबंदी या कोमलता का आग्रह - काव्य में मात्रा, तुकबंदी या कोमलता का भाव लाने के लिए कविजन परम्परा से शब्दों में तोड़-मरोड़ या जोड़ना-घटाना करके ध्वनि परिवर्तन करते रहे हैं। जयशंकर प्रसाद ने मुस्कान की जगह मुस्क्यान का प्रयोग किया है। 'ड़' ध्वनि की जगह 'र' का प्रयोग कोतलता लाने के लिए बहुत हुआ है। जैसे अंगड़ाई का अंगराई। तुकांत के लिए रघुबीर के लिए रघुबीरा जैसे ध्वनि परिवर्तन के अनेक उदाहरण हैं।

5. स्वाभाविक विकास - आप जानते हैं कि भाषा में अनवरत परिवर्तन ही उसके स्वाभाविक विकास का एकमात्र कारण है। यद्यपि भाषा में परिवर्तन की गति बहुत धीमी होती है। संस्कृत से पालि, प्राकृत, अपभ्रंश और उससे आधुनिक भाषाओं का जन्म हजारों वर्ष के स्वाभाविक विकास का परिणाम है। इसी प्रकार हिन्दी के हजारों शब्दों की ध्वनियों में परिवर्तन होता रहा है जिससे वे शब्द बिल्कुल नए शब्द के रूप में सामने आते रहे हैं। यह प्रक्रिया आज भी जारी है।

ध्वनि-परिवर्तन के कारणों के विस्तार से अध्ययन से दो बातें स्पष्ट हैं। पहली ध्वनि परिवर्तन एक धीमी प्रक्रिया है जो अनवरत चलती रहती है। दूसरी, किसी भी शब्द में ध्वनि परिवर्तन का कोई एक कारण नहीं होता बल्कि अनेक कारण हो सकते हैं। अध्ययन की सुविधा के लिए हम विविध कारणों का उल्लेख कर सकते हैं, किन्तु यह निश्चित नहीं कि ध्वनि-परिवर्तन के लिए केवल वही कारण उत्तरदायी है।

5.6 ध्वनि परिवर्तन की दिशाएं

ध्वनि-परिवर्तन के कारणों पर विस्तृत विवेचन के बाद अब हम यह देखेगें कि ध्वनि परिवर्तन का भाषा वैज्ञानिक रूप क्या है, अर्थात उसकी दिशा क्या है। ध्वनि-परिवर्तन की दिशाओं के अन्तर्गत हम निम्नलिखित बिंदुओं के विविध आयामों का अध्ययन करेगें। ध्वनि-परिवर्तन की प्रमुख दिशाएं इस प्रकार हैं -

1. ध्वनि लोप
2. ध्वनि-आगमन
3. ध्वनि-विपर्यय
4. समीकरण
5. विषमीकरण
6. अनुनासिकता
7. मात्रा भेद
8. घोषीकरण
9. प्राणीकरण

1. ध्वनि लोप - उच्चारण में शीघ्रता, मुखसुख या स्वराघात आदि के प्रभाव से कुछ ध्वनियाँ लुप्त हो जाती हैं। यही ध्वनि-लोप है। ध्वनि-लोप तीन तरह से होता है –

1. स्वर लोप
2. व्यंजन लोप
3. अक्षर लोप। इन तीनों का भी आदि, मध्य और अंत्य तीन-तीन स्थितियाँ हैं।

(क) **स्वर लोप** - इसमें स्वर ध्वनि का लोप निम्नलिखित उदाहरणों से समझा जा सकता है -

I. **आदि स्वर लोप** - अनाज > नाज, असवार > सवार, अफ़साना > फ़साना, अहाता > हाता, अभ्यंतर > भीतर।

II. **मध्य स्वर लोप** - शाबास > साबस, बलदेव > बल्देव।

III. **अंत्य स्वर लोप** - Bombe (फ्रेंच) > Bomb (अंग्रेजी)

(ख) व्यंजन लोप –

I. आदि व्यंजन लोप - स्थापना > थापना, शमशान > मशान, स्थली > थाली, स्कंध >कंध, कंधा

II. मध्य व्यंजन लोप - कोकिल > कोइल, डाकिन > डाइन, उपवास >उपास, कुलत्थ > कुलथी

III. अंत्य व्यंजन लोप - कमांड (अंग्रेजी) > कमान (हिन्दी)

(ग) अक्षर लोप -

I. **आदि अक्षर लोप -** आदित्यवार > इतवार

II. **मध्य अक्षर लोप** - नीलमणि > नीलम, फलाहारी > फलारी, दस्तखत > दस्खत

III. **अंत्य अक्षर लोप** - व्यंग्य > व्यंग, निम्बुक > नींबू, मौक्तिक > मोती

IV. **समध्वनि लोप -** इसमें किसी शब्द में एक ही ध्वनि या अक्षर दो बार आए तो उसमें से एक का लोप हो जाता है।
जैसे नाककटा > नकटा, खरीददार > खरीदार।

2. ध्वनि आगमन - इसमें कोई नई ध्वनि आती है। लोप का उलटा आगमन है। इसमें भी स्वर आगम, व्यंजन आगम, अक्षर आगम तीन भेद हैं। इनकी तीन या तीन से अधिक स्थितियाँ इस प्रकार हैं –

I. स्वरागम –

आदि स्वरागम - स्कूल > इस्कूल, स्नान >अस्नान, स्तुति > अस्तुति, सवारी > असवारी।

मध्य स्वरागम - मर्म > मरम, गर्म > गरम, पूर्व > पूरब, प्रजा > परजा, भक्त > भगत, बैल > बइल।

अंत्य स्वरागम - दवा > दवाई।

II. व्यंजनागम –

आदि व्यंजनागम - उल्लास > हुलास, ओष्ठ > होंठ।

मध्य व्यंजनागम - वानर > बन्दर, लाश > लहाश, सुख > सुक्ख, समन > सम्मन।

अंत्य व्यंजनागम - चील > चील्ह, भौं > भौंह, परवा > परवाह, उमरा > उमराव।

III. अक्षरागम -

आदि अक्षरागम - गुंजा झ घुँगुची।

मध्य अक्षरागम - खल झ खरल, आलस झ आलकस।

अंत्य अक्षरागम - बधू झ बधूरी, आँक झ आँकड़ा, मुख झ मुखड़ा।

3. ध्वनि विपर्यय - इसमें किसी शब्द के स्वर, व्यंजन या अक्षर एक स्थान से दूसरे स्थान पर चले जाते हैं और दूसरे स्थान के पहले स्थान पर आ जाते हैं। जैसे 'मतलब' से 'मतबल' होना। इसमें 'ल' और 'ब' व्यंजनों ने एक दूसरे का स्थान ले लिया है। ध्वनि विपर्यय की विभिन्न स्थितियाँ इस प्रकार हैं –

I. स्वर विपर्यय - कुछ > कछु, पागल > पगला, अनुमान > उनमान।

II. व्यंजन विपर्यय - चिह्न > चिन्ह, डेस्क > डेक्स, ब्राह्मण > ब्राम्हन, अमरूद > अरमूद, वाराणसी > बनारस, खुरदा > खुदरा

III. अक्षर विपर्यय - मतलब > मतबल, लखनऊ > नखलऊ।

4. समीकरण - इसमें एक ध्वनि दूसरे को प्रभावित करके अपना रूप देती है। जैसे 'पत्र' का 'पत्ता' हो गया। यहाँ 'त्' ध्वनि ने 'र्' ध्वनि को प्रभावित करके 'त्' बना लिया। समीकरण प्रायः उच्चारण के कारण होता है। समीकरण स्वर और व्यंजन दोनों में होता है।

I. स्वर समीकरण - खुरपी > खुरूपी, जुल्म > जुलम, अँगुली > उँगली।

II. व्यंजन समीकरण - चक्र > चक्का, लकड़बग्घा > लकड़बग्गा, कलक्टर > कलट्टर, शर्करा > शक्कर।

III. अपूर्ण समीकरण - डाकघर > डाग्घर।

IV. पारस्परिक व्यंजन समीकरण - विद्युत > बिजली, सत्य > सच, वाद्य >बाजा।

5. विषमीकरण - यह समीकरण का उलटा है। इसमें दो समान ध्वनियों में एक ध्वनि विषम हो जाती है। जैसे - कंकन > कंगन, मुकुट > मउर, काक > काग, तिलक > टिकली।

6. अनुनासिकता - अनुनासिकता दो तरह से होती है। सकारण और अकारण। सकारण जैसे कम्पन, काँपना, चन्द्र आदि। अकारण अनुनासिकता अपने आप होती है। इसका कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं होता। जैसे 'सर्प' से 'साँप' बना। 'सर्प' में अनुनासिकता नहीं थी किन्तु 'साँप' में अपने आप अर्थात अकारण आ गई। अन्य उदाहरण भी देखे जा सकते हैं - श्वास > साँस, कूप > कुआँ, अश्रु > आँसू, भ्रू > भौं, सत्य > सच, साँच

7. मात्रा-भेद - मुख-सुख या प्रयत्न लाघव के लिए कभी ह्स्व स्वर का दीर्घ या दीर्घ स्वर को ह्स्व बना दिया जाता है। इस तरह मात्रा भेद से ध्वनि परिवर्तन होता है।

दीर्घ से ह्स्व स्वर - आलाप > अलाप, पाताल > पताल, आफिसर >अफसर, आराम > अराम, बानर > बंदर, बादाम > बदाम, आकाश > अकास।

ह्रस्व से दीर्घ स्वर - अक्षत > आखत, कल > काल्ह, काक > कागा, गुरु > गुरू, लज्जा > लाज, हरिण > हिरना आदि।

8. घोषीकरण - इस स्थिति में कुछ शब्दों में घोष ध्वनि अघोष और अघोष ध्वनि घोष हो जाती है। ऐसा ध्वनि परिवर्तन प्रायः उच्चारण की सुविधा की दृष्टि से होता है।

घोष से अघोषीकरण - डंडा झ डंटा, खूबसूरत झ खपसूरत।

अघोष से घोषीकरण - मकर झ मगर, शाक झ साग, एकादश झ एग्यारह, शती झ सदी, प्रकट झ परगट

5.7 ध्वनि नियम

ध्वनि-परिवर्तन के कारण और दिशाओं के विस्तृत अध्ययन से आप यह भली-भाँति समझ गये होगें के भाषा के विकास में ध्वनि-परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। किसी भाषा विशेष में कुछ विशेष परिस्थितियों में कुछ विशेष प्रकार के ध्वनिगत बदलाव आते हैं जिनके आधार पर ध्वनि-नियम सुनिश्चित किए जाते हैं।

डॉ भोलानाथ तिवारी ने ध्वनि नियम की वैज्ञानिक परिभाषा देते हुए लिखा है, 'किसी विशिष्ट भाषा की विशिष्ट ध्वनियों में किसी विशिष्ट काल और कुछ विशिष्ट दशाओं में हुए नियमित परिवर्तन या विकार को उस भाषा का ध्वनि-नियम कहते हैं।' इस परिभाषा में चार बातें स्पष्ट हैं - पहली, ध्वनि-नियम किसी भाषा विशेष का होता है अर्थात एक भाषा के ध्वनि-नियम को दूसरी भाषा पर नहीं लागू किया जा सकता। दूसरी, एक भाषा की सभी ध्वनियों पर यह नियम लागू न होकर कुछ विशेष ध्वनियों या ध्वनि वर्ग

पर लागू होता है। तीसरी, ध्वनि-परिवर्तन एक विशेष काल में होता है अर्थात आवश्यक नहीं कि वही ध्वनि-परिवर्तन सदा होता रहें। चौथी, ध्वनि-परिवर्तन विशेष दशा या परिस्थितियों में होता है।

ध्वनि-परिवर्तन से सम्बंधित कतिपय विद्वानों के ध्वनि नियम इस प्रकार हैं -

1. ग्रिम नियम - इस नियम के प्रवर्तक जर्मन भाषा वैज्ञानिक याकोब ग्रिम हैं। इन्हीं के नाम से यह नियम प्रचलित हुआ। ग्रिम नियम का संबंध भारोपीय स्पर्शों से है जो जर्मन भाषा में परिवर्तित हो गये थे जिसे जर्मन भाषा का वर्ण-परिवर्तन कहते हैं। प्रथम वर्ण-परिवर्तन ईसा से कई सदी पूर्व हुआ था और दूसरा वर्ण-परिवर्तन उत्तरी जर्मन लोगों से ऐंग्लो सेक्शन लोगों के पृथक होने के बाद 7वीं सदी में हुआ था। दोनों का कारण जातीय मिश्रण माना जाता है।

प्रथम वर्ण-परिवर्तन - ग्रिम नियम के अनुसार प्रथम वर्ण-परिवर्तन में जो सम्भवतः छठी-सातवीं ईसा पूर्व में हुआ था, मूल भारोपीय भाषा के कुछ स्पर्श वर्ण-परिवर्तित हो गये थे। इसे तालिका रूप में समझा जा सकता है -

भारोपीय मूल भाषा	जर्मन भाषा
घोष, महाप्राण स्पर्श घ्, ध, भ्	घोष अल्पप्राण ग्, द्, ब्, हो गए।
घोष अल्पप्राण ग्, द्, ब्	अघोष अल्पप्राण क्, त् प् हो गए।

अघोष अल्पप्राण क्, त्, प् संघर्षी महाप्राण ख्(ह्), थ्, फ् हो गए।

द्वितीय वर्ण-परिवर्तन - प्रथम वर्ण-परिवर्तन में मूल भारोपीय भाषा से जर्मन भाषा भिन्न हुई थी किन्तु द्वितीय वर्ण-परिवर्तन में जर्मन भाषा के दो रूपों उच्च जर्मन और निम्न जर्मन में यह अन्तर पड़ा। फलतः इन दोनों की कुछ ध्वनियाँ भिन्न हो गयीं।

निम्न जर्मन (अंग्रेजी)	**उच्च जर्मन**
प् का फ् = डीप (Deep)	टीफ (Tief)
ट् का ट्स् या स्स = फूट (Foot)	फस्स (Fuss)
क् का ख् = योक (Yoke)	याख (Joch)
ड् का ट् = डीड (Deed)	टाट (Tat)
थ् का ड् = थ्री (Three)	ड्राय (Drei)

2. ग्रेसमैन नियम - ग्रेसमैन की स्थापना ये है कि भारोपीय मूल भाषा में यदि शब्द या धातु के आदि और अंत दोनों स्थानों पर महाप्राण हों तो संस्कृत, ग्रीक आदि में एक अल्पप्राण हो जाता है। ग्रेसमैन के अनुसार भारोपीय मूल भाषा की दो अवस्थाएं रही होगीं। प्रथम अवस्था में दो महाप्राण रहे होगें दूसरी अवस्था में एक अल्पप्राण हो गया होगा।

3. वर्नर नियम - वर्नर ने यह पता लगाया कि ग्रिम-नियम बलाघात पर आधारित था। मूल भाषा के क्,त्,प् के पूर्व यदि बलाघात हो तो ग्रिम नियम के अनुसार परिवर्तन होता है किन्तु यदि स्वराघात क्, त्, प् के बाद वाले स्वर पर हो जो ग्रेसमैन की भाँति ग्, द्, ब हो जाता है। जैसे संस्कृत के सप्त, शतम् गोथिक भाषा में सिबुन, हुन्द हो जाते हैं।

5.8 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि ध्वनि भाषा की मूल है और ध्वनि विज्ञान के अन्तर्गत केवल भाषागत ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। ध्वनि का अर्थ उसके विविध आयामों से परिचित होकर आपने ध्वनि के वर्गीकरण में स्वर और व्यंजन की भिन्न-भिन्न प्रकृति को जाना। सृष्टि के समस्त जड़-चेतन पदार्थों की तरह ध्वनि भी एक परिवर्तन शील तत्व है। काल के प्रवाह में किसी भी भाषा में नई ध्वनियाँ आती हैं और पुरानी ध्वनियाँ लुप्त हो जाती हैं। ध्वनि-परिवर्तन के अभ्यंतर और बाह्य कारणों के अन्तर्गत इस इकाई में ध्वनि-परिवर्तन के विभिन्न कारणों और दिशाओं का उदाहरण सहित भाषा वैज्ञानिक अध्ययन कराया गया है। ध्वनि-परिवर्तन के सूक्ष्म और भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के पश्चात कुछ ध्वनि नियम निर्धारित किए गये जो प्राकृतिक नियम की तरह अटल न होकर विशेष भाषा की काल और परिस्थिति में लागू होते रहे हैं। यद्यपि इनके अपवाद भी हैं। प्रस्तुत इकाई में कुछ प्रसिद्ध ध्वनि नियमों से भी आपको परिचित कराया गया है। इस तरह इस इकाई के सम्पूर्ण अध्ययन से आप ध्वनि विज्ञान के बारे में भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने में समर्थ हो सकेगें।

5.9 पारिभाषिक शब्दावली

वागवयव	-	उच्चारण में सहायक मुख-विवर के अंग
संवृत	-	मुख-विवर का सँकरा होना
विवृत	-	मुख-विवर का खुला होना
बलाघात	-	उच्चारण में लगने वाला बल
पंचमाक्षर	-	नागरी वर्णमाला के प्रत्येक व्यंजन वर्ग का पाँचवा वर्ण (ङ, ´, ण, न, म)
अल्पप्राण	-	उच्चारण में लगने वाला कम श्वासबल
महाप्राण	-	उच्चारण में लगने वाला अधिक श्वासबल
जिह्वामूल	-	जीभ का जड़ (मूल) भाग
जिह्वाग्र	-	जीभ का आगे का भाग
जिह्वापश्च	-	जीभ का पीछे का भाग
जिह्वामध्य	-	जीभ के बीच का भाग
जिह्वानोक	-	जीभ के आगे भाग की नोक
काकल	-	कंठ भाग
उपालिजिह्व	-	कंठ मार्ग
मात्रा	-	उच्चारण में लगने वाला समय
ह्स्व	-	कम समय वाली मात्रा
दीर्घ	-	अधिक समय वाली मात्रा
नासिक्य	-	नाक से उच्चारित होने वाली ध्वनियाँ

5.10 अभ्यास प्रश्न एवं उत्तर

लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. स्वर और व्यंजन ध्वनि में क्या अंतर है ?
2. 'प्रयत्न' पर टिप्पणी लिखिए।
3. संयुक्त व्यंजन पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।
4. ध्वनि-परिवर्तन के सोदाहरण पाँच कारण बताइए।
5. ग्रिम ध्वनि-नियम का परिचय दीजिए।
6. लोड़ित (लुंठित) और उत्क्षिप्त ध्वनियाँ कौन-सी हैं।

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. स्वर उच्चारण में लगने वाला समय ..... कहलाता है। (बलाघात/मात्रा)

2. 'र' ..... व्यंजन ध्वनि है। (लुंठित/उत्क्षिप्त)
3. 'कच्चा' में 'च्चा' ..... व्यंजन है। (दीर्घ/संयुक्त)
4. सत्य का सच होना ध्वनि परिवर्तन का..... कारण है। (मुखसुख/अशिक्षा)
5. 'अनाज से नाज' में स्वर लोप की ..... स्थिति है। (आदि/मध्य)
6. ग्रिम ध्वनि नियम ..... ग्रिम की देन है। (वर्नर/याकोब)
7. अभी, कभी में ध्वनि परिवर्तन का कारण है .....। (शीघ्रता/अपूर्ण अनुकरण)
8. चिन्ह से चिन्ह का होने में ..... विपर्यय है। (स्वर/व्यंजन)
9. स्वरयंत्र मुख से उत्पन्न होने वाली ध्वनि ..... है। (काकल्य/वर्त्स्य)
10. जीभ का अग्रभाग ..... स्वरों के उच्चारण में सहायक होता है। (इ,ई/उ,ऊ)

सही/गलत पर निशान लगाइए -

1. ध्वनि भाषा की लघुतम इकाई है।सही/गलत
2. ध्वनि विज्ञान में ध्वनि का आशय सभी प्रकार की ध्वनियों से है।सही/गलत
3. पंचामक्षर, पाँच अक्षरों के मेल से बने शब्द को कहते हैं।सही/गलत
4. ऐ, औ संयुक्त स्वर हैं। सही/गलत
5. त, थ, द, ध दंत्योष्ठ्य ध्वनियाँ हैं। सही/गलत
6. ड़, ढ़ उत्क्षिप्त व्यंजन ध्वनियाँ हैं। सही/गलत
7. प्राणतत्व ध्वनि उच्चारण में प्रयुक्त हवा को कहते हैं।सही/गलत
8. संवृत-विकृत का सम्बध मुखविवर से है।सही/गलत
9. ए, ओ की गणना ह्रस्व स्वर में भी होती है।सही/गलत
10. विसर्ग (:) काकल्य ध्वनि है।सही/गलत

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

निम्नलिखित वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को ध्यान से पढ़कर सही विकल्प चुनिए -

1. निम्न में से किसका सम्बंध ध्वनि नियम से नहीं है ?

(अ) ब्लूम फील्ड (ब) ग्रेसमैन (स) याकोब ग्रिम (द) वर्नर

2. 'मुख से मुखड़ा' में ध्वनि-परिवर्तन किस दशा से संबधित है ?

(अ) लोप (ब) आगम (स) विपर्यय (द) समीकरण

3. 'स्कूल झ इस्कूल' में ध्वनि परिवर्तन की कौन-सी दिशा है ?

(अ) स्वर-लोप (ब) समीकरण (स) स्वर आगम (द) विषमीकरण

4. 'रघुवीर झ रघुवीरा' में ध्वनि परिवर्तन में कौ-सा कारण है ?

(अ) काव्यात्मकता (ब) अशिक्षा (स) भावावेश (द) मुखसुख

5. निम्न में कौन-सा वर्ण अल्पप्राण नहीं है ?

(अ) क, ग (ब) क, ख (स) ग, घ (द) ख, घ

6. 'र' किस प्रकार की ध्वनि है ?

(अ) उत्क्षिप्त (ब) लुंठित (स) पार्श्विक (द) संघर्षी

7. निम्न में कौन-सी ध्वनि घोष है ?

(अ) ग, घ (ब) क, च (स) ट, छ (द) त, प

8. इनमें से कौन दीर्घ या द्वित्व व्यंजन का शब्द नहीं है ?

(अ) सर्दी (ब) कच्चा (स) पक्का (द) पत्ता

9. इनमें से उत्क्षिप्त व्यंजन ध्वनि कौन-सी है ?

(अ) य, र, व (ब) श, स, ष (स) ड़, ढ़ (द) क्ष, त्र, ज्ञ

10. वर्नर के अनुसार ग्रिमनियम किस पर आधारित था ?

(अ) स्वराघात (ब) बलाघात (स) घोषीकरण (द) मात्रा

उत्तर माला -

रिक्त स्थानों की पूर्ति -

1. मात्रा 2. लुंठित 3. दीर्घ 4. मुखसुख 5. आदि 6. याकोब
7. शीघ्रता 8. व्यंजन 9. काकल्य 10. इ, ई

सही/गलत वाक्य -

1. सही 2. गलत 3. गलत 4. सही 5. गलत 6. सही 7. सही 8. सही
9. सही 10. सही

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

1. (अ)	2. (ब)	3. (स)	4. (अ)	5. (द)
6. (ब)	7. (अ)	8. (अ)	9. (स)	10. (ब)

5.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, किताब महल, पटना
2. डॉ राजमणि शर्मा , आधुनिक भाषा विज्ञान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
3. डॉ तेजपाल चौधरी, भाषा और भाषा विज्ञान, विकास प्रकाशन, कानपुर
4. कामता प्रसाद गुरू, हिन्दी व्याकरण, लोक भारती, इलाहाबाद

5.12 निबंधात्मक प्रश्न –

1. ध्वनि का अर्थ स्पष्ट करते हुए उसके विविध आयामों का परिचय दीजिए तथा साथ ही ध्वनियों के वर्गीकरण के आधार बताइए।
2. स्वर ध्वनियों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए तथा ध्वनि-परिवर्तन के कारणों पर सोदाहरण प्रकाश डालिए।

इकाई 6 ध्वनि प्रक्रिया

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 ध्वनि के वागवयव और उनके कार्य
6.4 ध्वनि गुण
6.5 मानस्वर
6.6 स्वनिम : स्वरूप और संकल्पना
6.6.1 स्वनिम और सहस्वन
6.6.2 स्वनिम के भेद
6.6.3 स्वनिम विश्लेषण की विधि
6.7 स्वनिम के सहायक सिद्धान्त
6.8 सारांश
6.9 पारिभाषिक शब्दावली
6.10 बोध प्रश्न
6.11 संदर्भ ग्रंथ

6.1 प्रस्तावना

'ध्वनि विज्ञान' शीर्षक से पिछली इकाई में हमने 'ध्वनि' (स्वन) का स्वरूप, उसका वर्गीकरण का अध्ययन किया। साथ ही ध्वनि परिवर्तन के कारण और उनकी दिशाओं के बारे में विस्तार से जाना। प्रसिद्ध ध्वनि-नियमों से भी हम परिचित हुए। इस प्रकार विभिन्न शीर्षकों के अध्ययन से हम 'ध्वनि' के सैद्धान्तिक पक्ष से परिचित हुए। प्रस्तुत इकाई में हम ध्वनि प्रक्रिया से सम्बंधित विविध आयामों का अध्ययन करेगें। ध्वनि प्रक्रिया का सम्बंध उच्चारण से है। शरीर के जिन अंगों से भाषा ध्वनि का उच्चारण किया जाता है, उन्हें वाग्यत्र कहते हैं। वाग्यंत्र के विविध अंग दो प्रकार के हैं - चल और अचल। चल को 'करण'और अचल को 'स्थान' कहते हैं। करण वागवयव प्रायः गतिशील होते हैं। वे उच्चारण में विभिन्न लय उत्पन्न कर सकते हैं। जैसे जिह्वा और ओष्ठ। स्थान अर्थात अचल वागवयव स्थिर होते हैं। जिह्वा इन स्थानों का स्पर्श कर सकती है। दाँत, तालु, मूर्धा इस प्रकार के अवयव हैं। ध्वनि गुण ध्वनियों के लक्षण हैं। उच्चारण करते समय हम कभी शब्द पर कभी वाक्य पर विशेष बल देते हैं अथवा अपने कथ्य को स्पष्ट करने के लिए विशेष सुर या गति में बोलते हैं। इस प्रकार बलाघात, मात्रा, सुर, सुरतान,

सुर-लहर वृत्ति, संगम - ये ध्वनि के गुण अर्थात लक्षण हैं जिनके कारण एक सामान्य अर्थ वाला वाक्य विशेष अर्थ की व्यंजना करता है।

इस इकाई में आप मानस्वर और स्वनिम के बारे में भी अध्ययन करेगें। आधुनिक भाषा विज्ञान के निष्कर्ष के आधार पर आठ मानस्वर माने गये हैं जिन्हें आगे चित्र की सहायता से स्पष्ट किया गया है। इसी प्रकार स्वनिम के स्वरूप और संकल्पना में विस्तार से चर्चा की गयी है। प्रत्येक भाषा में अपने स्वनिम होते हैं। ये अर्थ भेदक तत्व हैं। ये व्यतिरेकी व्यवस्था में आते हैं। एक स्वनिम के अनके सहस्वन होते हैं। इन्हें 'संस्वन' या 'संध्वनि' भी कहा गया है। स्वनिम के संदर्भ में कतिपय प्रमुख सिद्धांतों के बारे में भी आप अध्ययन कर सकेगें जिनकी सहायता से स्वनिम और सहस्वन का निर्धारण किया जाता है। साथ ही स्वनिम की ध्वन्यात्मक लेखन की विधि से भी परिचित हो सकेगें।

6.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से ध्वनि-प्रक्रिया के अन्तर्गत आप -

1. ध्वनि के उच्चारण और श्रवण की प्रक्रिया को समझ सकेगें।
2. स्वर और व्यंजन ध्वनियों के उच्चारण में सहायक वागवयवों का परिचय और उनकी कार्य-प्रक्रिया से अवगत हो सकेगें।
3. ध्वनि गुणों का परिचय प्राप्त कर सकेगें।
4. मानस्वर से परिचित होकर उनके स्थान वर्गीकरण को वैज्ञानिक दृष्टि से समझ सकेगें।
5. स्वनिम-सहस्वन के स्वरूप और संकल्पना से परिचित हो सकेगें।
6. स्वनिम के भेदों को जानकर उसके विविध रूपों से परिचित हो सकेगें।
7. स्वनिम विश्लेषण की भाषा वैज्ञानिक विधि समझ सकेगें।
8. स्वनिम के अध्ययन में सहायक सिद्धान्तों को जानकर उनका वर्गीकरण करने में सक्षम हो सकेगें।

6.3 ध्वनि के वागवयव और उनके कार्य

ध्वनि-प्रक्रिया का सम्बंध मनुष्य के शरीर से होता है। उच्चारणगत और श्रवणगत प्रक्रिया शरीर के विविध अंगों से सम्पन्न होती है जिसके द्वारा ध्वनि उत्पन्न होती है और जिसे हम सुन सकते हैं। ध्वनि विज्ञान में जिस विभाग में ध्वनि उच्चारण करने एवं सुनने में सहायक अंगों पर प्रकाश डाला जाता है, उसे 'शारीरिक ध्वनि विज्ञान' कहा गया है। इसे 'औच्चारणिक ध्वनि विज्ञान' (Articulatory Phonitics) भी कहते हैं। ध्वनि प्रक्रिया में उच्चारण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। जिन अंगों या अवयवों से भाषा ध्वनियों का उच्चारण किया जाता है, उन्हें 'ध्वनि यंत्र', 'वाग्वयव' या 'वाग्यंत्र' कहते हैं। उसका मात्रात्मक (दीर्घ, ह्रस्व) ठहराव आदि अनेक बातें वागवयव ये ही सम्बद्ध है। भाषा ध्वनि की उच्चारण प्रक्रिया में वाग्यंत्र के निम्नलिखित अवयव कार्य करते हैं –

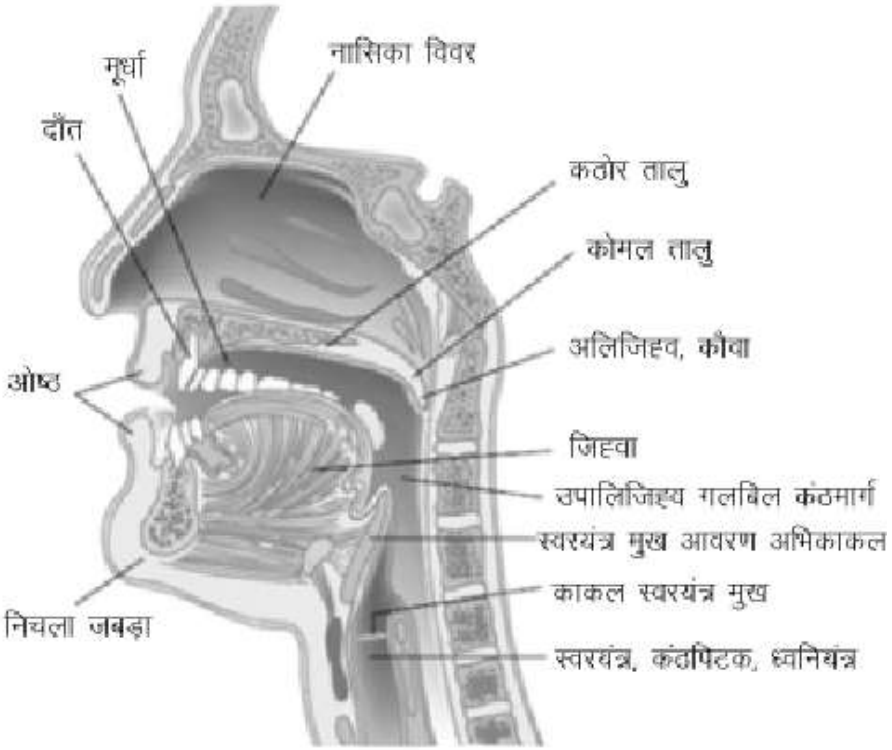

चित्र 1. वाग्यंत्र के विविध अवयव

1. गलबिल, कंठ या कंठमार्ग (Pharynx)
2. भोजन नलिका (Gullet)
3. स्वर-यंत्र या ध्वनि-यंत्र (Larynx)
4. स्वर-यंत्र मुख या काकल (Glottis)
5. स्वर-तंत्री या ध्वनि-तंत्री (Vocal Chord)
6. स्वर यंत्र मुख आवरण (Epiglotis)
7. नासिका-विवर (Nazal Cavity)
8. मुख-विवर (Mouth Cavity)
9. कौवा, घंटी (Uvula)
10. कंठ (Guttur)
11. कोमल तालु (Soft Palate)
12. मूर्द्धा (Cerebrum)
13. कठोर तालु (Hard Palate)
14. वर्त्स (Alveola)
15. दाँत (Teeth)

16. ओष्ठ (Lip)
17. जिह्वा मध्य (Middle of the Tongue)
18. जिह्वा नोक (Tip of the Tongue)
19. जिह्वा अग्र (Front of the Tongue)
20. जिह्वा (Tongue)
21. जिह्वा पश्च (Back of the Tongue)
22. जिह्वा मूल (Root of the Tongue)

वागवयवों की कार्यप्रक्रिया और उनसे उच्चारित ध्वनियों का विवरण इस प्रकार है -

श्वासनली, भोजननली - ध्वनि उच्चारण में वायु आवश्यक तत्व है। हमारे द्वारा श्वास-प्रश्वास लेना ही हवा को नाक के रास्ते फेफड़े तक पहुँचाना है और उसी रास्ते नाक से बाहर कर देना है। साँस के द्वारा हवा फेफड़े तक पहुँचती है और उसे स्वच्छ कर उसी रास्ते बाहर निकल जाती है। श्वास नली के पीछे भोजन नली है जो नीचे आमाशय तक जाती है। श्वास नली और भोजन नली के बीच दोनों नलियों को अलग करने वाली एक दीवार है।

अभिकाकल भोजन नली के विवर के साथ श्वास नली की ओर झुकी हुई एक छोटी-सी जीभ की तरह अंग है जिसे अभिकाकल (Epiglottis) कहते हैं। ध्वनि उच्चारण में अभिकाकल का सीधा सम्बंध नहीं है किन्तु यह स्वरयंत्र की रक्षा अवश्य करता है। कुछ विद्वानों के अनुसार आ, आ के उच्चारण में यह अभिकाकल पीछे खिंचकर स्वर-यंत्र मुख के पास चला जाता है और ई, ए के उच्चारण में यह बहुत आगे खिंच जाता है।

स्वरयंत्र और स्वरतंत्री - स्वरयंत्र ध्वनि उच्चारण का प्रधान अवयव है। यह श्वास नलिका के ऊपरी भाग में अभिकाकल से नीचे स्थित होता है। इसे बोलचाल की भाषा में 'टेंटुआ' या 'घंटी' भी कहते हैं। स्वरयंत्र में पतली झिल्ली के बने परदे होते हैं। इन परदों के बीच खुले भाग को स्वरयंत्र मुख या काकल (Glottis) कहते हैं। साँस लेते समय या बोलते समय हवा इसी से होकर अन्दर-बाहर जाती है। इन स्वर तंत्रियों के द्वारा कई प्रकार की ध्वनियाँ जैसे (फुसफुसाहट, भनभनाहट) उत्पन्न की जाती है। इसके लिए स्वरतंत्रियों को कभी एक दूसरे के निकट लाना पड़ता है और कभी दूर रखना पड़ता है।

अलिजिह्वा अर्थात कौवा - जहाँ से नासिका विवर और मुख विवर के रास्ते अलग होते हैं, उसी स्थान पर छोटी सी जीभ के आकार का मांसपिड होता है जिसे अलिजिह्व या कौवा कहते हैं। यह कोमल तालु के साथ नासिका का मार्ग खोलने व बंद करने का कार्य करता है जो प्रायः तीन स्थितियों में होता है। पहली स्थिति में यह ढीला होकर नीचे की ओर लटका रहता है, मुँह बंद रहता है और हवा बिना रोक-टोक के नासिका विवर से आती जाती रहती है। यह स्वाभाविक स्थिति है। दूसरी स्थिति में कौवा तन कर नासिका विवर को बंद करके हवा को उसमें नहीं जाने देता। फलतः हवा मुख विवर से आती-जाती है। स्वर व्यंजन का उच्चारण इसी स्थिति में होता है। तीसरी स्थिति में कौवा न तो ऊपर नासिका विवर को रोकता है और न ही नीचे मुख विवर को। वह मध्य में रहता है जिससे हवा नासिका और मुख दोनों से निकलती है।

अनुनासिक स्वरों का उच्चारण इसी स्थिति में होता है। इसके अतिरिक्त क़, ख़, ग़ जैसी फारसी ध्वनियों के उच्चारण में भी यह सहायक होता है।

तालु - मुख विवर में कंठस्थान या कौवा और दाँतों के बीच में कोमल तालु होते हैं। कोमल और कठोर तालु एक चल अवयव है। अ, इ स्वर तथा क, ख, ग स्पर्श व्यंजनों के उच्चारण में कोमल तालु सहायक होता है। साथ ही नासिक्य ध्वनि उच्चारण में भी मदद करता है। कठोर तालु कोमल तालु से आगे कठोर अस्थि संरचना के रूप में होता है जो स्थिर और निश्चेष्ट रहता है।इसकी सहायता से स्वरों में इ, ई और व्यंजनों में चवर्गीय ध्वनियाँ उच्चारित होती है।

मूर्धा - कठोर तालु के पीछे के अंतिम भाग को मूर्धा कहते हैं। इसमें उच्चारण में जिह्वा उलटकर मूर्धा तक जाती है। अतः इस स्थान से उच्चारित होने वाली ट वर्गीय ध्वनियाँ 'मूर्धन्य' कहलाती हैं।

वर्त्स - यह दाँतों के मूल स्थान से कठोर तालु के पहले तक फैला होता है। यह एक खुरदरा सा निष्क्रिय वागवयव है। जिह्वा के विविध भागों के स्पर्श से यह ध्वनियों को विविध रूप में उच्चारण करने में सहायक होता है। स, ज, र, ल, न जैसी ध्वनियाँ 'वर्त्स्य' ही हैं।

दाँत - ध्वनि उच्चारण के प्रमुख अवयव हैं - दाँत। प्रायः उच्चारण में ऊपर के दाँतों का ही अधिक महत्व माना गया है। दाँत, नीचे के ओष्ठ या जीभ से मिलकर ध्वनि उच्चारण में सहायक होते हैं। तवर्गीय और से ध्वनि का उच्चारण दाँतों की सहायता से होता है।

जिह्वा - जीभ की सहायता से सभी भाषाओं की अधिकांश ध्वनियों का उच्चारण होता है। इसी से ध्वनि उच्चारण में इसके महत्व का पता चलता है। इसकी स्थिति मुख के निचले भाग में है। यह दाँत और तालु के विभिन्न भागों का स्पर्श कर विविध प्रकार की ध्वनियों में सहायक होती हैं। जीभ के पाँच भाग हैं। ध्वनि उच्चारण में सभी का महत्व है। देखें चित्र –

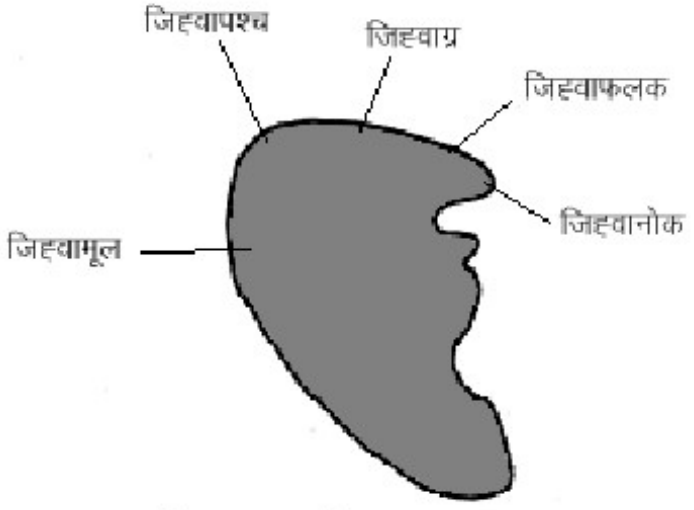

चित्र – 2 जिह्वा (The Tongue)

I. जिह्वा नोक - जीभ के सबसे आगे का नुकीला भाग 'जिह्वानोक' कहलाता है। इससे आ, त, थ, द, स ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

II. जिह्वा फलक - जिह्वाग्र बिंदु से संयुक्त यह भाग मुख से बाहर भी निकाला जा सकता है। इससे 'स' का उच्चारण सम्भव होता है।

III. जिह्वाग्र - यह कठोर तालु के नीचे पड़ता है। इसकी विविध स्थितियों से च, छ, जैसी ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

IV. जिह्वामध्य - यह जिह्वा के बीच का भाग है। इसे कोमल तालु या कठोर तालु के बीच का सेतु भी कहा जाता है। जिह्वा के मध्य भाग की सहायता से मध्य स्वर या केन्द्रीय स्वरों का उच्चारण होता है।

V. जिह्वा पश्च - मध्य जिह्वा के बाद यह जीभ के पीछे का भाग है। यह उ, ओ, क, ख, ग और फारसी ध्वनि क, ख, ग के उच्चारण में सहायक होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वागयंत्र के विविध अवयव ध्वनि उच्चारण में किस प्रकार कार्य करते हैं। अब हम यह भी देखेगें कि वागयंत्र और उसके विभिन्न अवयवों द्वारा उत्पन्न ध्वनि को हम कैसे सुनते हैं। सुनने का सम्बंध मुख्य रूप से कान से है। इसलिए कान (कर्ण) को हम श्रवणयंत्र कह सकते हैं। जिसकी संरचना और श्रवण प्रक्रिया को जान लेना भी प्रासंगिक होगा।

चित्र – 3 वाह्य कर्ण

श्रवण यंत्र - श्रवण यंत्र अर्थात कान के तीन भाग होते हैं - वाह्य कर्ण, मध्यवर्ती कर्ण और अभ्यंतर कर्ण। वाह्य कर्ण के भी दो भाग होते हैं, पहना कान का सबसे ऊपरी हिस्सा जिसे हम कान की बाहरी बनावट के रूप में देखते हैं। श्रवण प्रक्रिया में इसकी कोई विशेष भूमिका नहीं होती। दूसरा भाग कान का वह छेद या नली जो कान के अन्दर तक जाती है। कान की नली लगभग एक या डेढ़ इंच लम्बी होती है। इसके भीतरी छेद पर एक झिल्ली होती है जो बाहरी कान को मध्यवर्ती कान से सम्बद्ध करती है। मध्यवर्ती कर्ण एक छोटी सी गहरी कोठरी के समान है जिसमें तीन छोटी-छोटी अस्थियाँ (हड्डी) होती हैं। इन अस्थियों का एक सिरा बाहरी कान

(बाह्य कर्ण) की झिल्ली से जुड़ा रहता है और दूसरा सिरा आभ्यंतर कर्ण (भीतरी कान) के बाहरी छिद्र से। मध्यवर्ती कर्ण के बाद आभ्यंतर कर्ण शुरू होता है। इसके खोखले भाग में उसी आकार की झिल्लियाँ होती हैं। इन दोनों के बीच में एक विशेष प्रकार का द्रव पदार्थ होता है। आभ्यंतर कर्ण के भीतरी सिरे की झिल्ली से श्रावणी शिरा के तंतु आरम्भ होते हैं जो मस्तिष्क से सम्बद्ध रहते हैं।

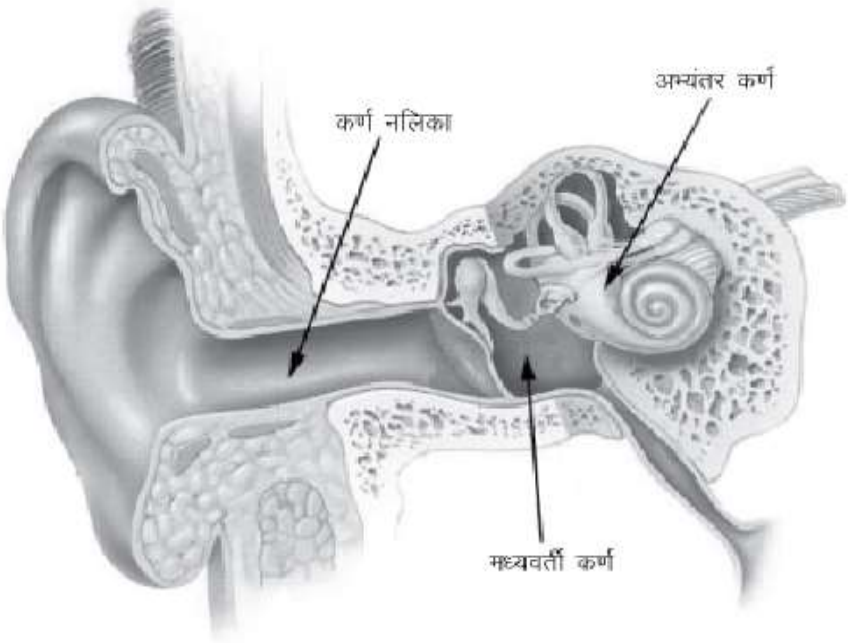

चित्र – 4. मध्यवर्ती और अभ्यंतर कर्ण

6.4 ध्वनि गुण (Sound Quality)

आप पहले ये जान चुके हैं कि भाषा का आधार 'ध्वनि' है। ध्वनि गुण से तात्पर्य भाषाध्वनि के गुणों से है। आपने देखा होगा कि उच्चारण करते समय हम किसी विशेष शब्द या अक्षर पर विशेष बल देते हैं। इससे एक ही वाक्य का अलग-अलग सुर या बलाघात होने से वाक्य का अर्थ ही बदल जाता है। जिन तत्वों के कारण वाक्य में इस प्रकार का अर्थ परिवर्तन आता है अथवा विशेष व्यंजना होती है, उन्हें 'ध्वनि गुण' कहते हैं। इसे 'ध्वनि लक्षण' (Sound Attributes) भी कहा जाता है।

मुख्य रूप से ध्वनि गुण निम्नलिखित हैं -

1. मात्रा - किसी भी ध्वनि के उच्चारण में जितना समय लगता है, उसे 'मात्रा' या 'मात्रा काल' कहते हैं। कम समय वाली मात्रा ह्रस्व, अधिक समय वाली दीर्घ और उससे भी अधिक समय वाली प्लुत कहलाती है। स्वर में ह्रस्व और दीर्घ स्वर के आधार पर ह्रस्व (छोटी) और दीर्घ (बड़ी) मात्रा होती है। व्यंजन में द्वित्व-व्यंजन मात्रा की दृष्टि से व्यंजन का दीर्घ रूप है।

इसी प्रकार संयुक्त स्वरों के उच्चारण में दीर्घ से भी अधिक समय लगता है लिसे 'प्लुत' कहा जाता है। प्लुत के लिए नागिरी लिपि में 'ऽ' का प्रयोग होता है। जैसे 'ओऽम'।

मात्रा के सम्बंध में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। पहली, हम उच्चारण एक गति से नहीं करते। कभी तेज गति से बोलते हैं तो कभी धीमी या मध्यम गति से। अतः बोलने की गति का प्रभाव भी मात्रा के घटने-बढ़ने के रूप में पड़ता है। दूसरी बात बोलने की तरह मौन या विराम अथवा दो शब्दों के बीच मौन की भी मात्रा होती है। पूर्ण विराम, अर्द्ध विराम और अल्प विराम वस्तुतः मौन या रुकने की मात्रा को प्रकट करते हैं।

2. आघात(Accent) - प्रायः हम देखते हैं कि बोलते समय वाक्य के सभी अंशों पर बराबर जोर नहीं दिया जाता। कभी वाक्य के किसी शब्द पर कम तो दूसरे शब्द पर अधिक बल दिया जाता है। इसी प्रकार शब्द के बोलने में उसके सभी अक्षरों पर भी समान बल नहीं पड़ता। इसी बल या आघात को 'बलाघात' कहते हैं। भाषा की कोई भी ध्वनि बलाघात शून्य नहीं होती। कम या अधिक रूप में उसमें बलाघात होता ही है। बलाघात ध्वनि, अक्षर, शब्द और वाक्य के किसी एक अंश पर कम और दूसरे अंश पर अधिक पड़ता है। इस आधार पर बलाघात के भेद इस प्रकार हैं - ध्वनि बलाघात अर्थात स्वर या व्यंजन ध्वनियों पर पड़ने वाला बल। अक्षर बलाघात अक्षर पर पड़ता है। वाक्य में किसी शब्द विशेष पर पड़ने वाला बलाघात शब्द बलाघात होता है। जैसे 'वह घर गया' सामान्य वाक्य है किंतु यदि 'घर' पर बलाघात दिया जाय तो विशेष अर्थ व्यंजित होता है कि वह घर ही गया, कहीं और नहीं। कुछ वाक्य अपने निकटवर्ती वाक्यों की अपेक्षा विशेष जोर देकर बोले जाने पर वाक्य बलाघात होता है। जैसे 'तुम कुछ भी कहो। मैं यह नहीं कर सकता।' यहाँ दो वाक्य हैं। अपनी बात 'मैं यह नहीं कर सकता।' पर जोर देने के लिए पहले वाक्य की अपेक्षा दूसरे वाक्य पर अधिक बल दिया जाता है। वाक्यों में बलाघात, आश्चर्य, भावावेश, आज्ञा, प्रश्न या अस्वीकार आदि भावों में प्रायः देखा जा सकता है। बलाघात के संदर्भ में आपने देखा कि बलाघात शक्ति या बल की वह मात्रा है जिसमें ध्वनि, अक्षर, शब्द या वाक्य का उच्चारण किया जाता है। शक्ति या बल की अधिकता के कारण ही बलाघात युक्त ध्वनि, अक्षर या शब्द अपने आसपास की ध्वनियों, अक्षरों या शब्दों आदि से अधिक मुखर हो जाता है। बलाघात में ध्वनियों, अक्षरों या शब्दों में किस प्रकार परिवर्तन होता है - यह आप पिछली इकाई के 'ध्वनि परिवर्तन' शीर्षक में पहले ही जान चुके हैं।

3. सुर - 'बलाघात' के अन्तर्गत आप जान चुके हैं कि सभी ध्वनियाँ बराबर शक्ति या बल से नहीं बोली जाती। इसी प्रकार वाक्य की सभी ध्वनियाँ एक सुर में नहीं बोली जाती। उनमें सुर ऊँचा या नीचा होता रहता है। 'बलाघात' की तरह 'सुर' का सम्बंध भी व्यक्ति की मनः स्थिति से है। सुर का आधार 'सुर तंत्रियाँ' हैं। हम जानते हैं कि घोष ध्वनियों के उच्चारण में स्वर तंत्रियों में कम्पन होता हैं। कम्पन जब अधिक तेजी से होता है तो ध्वनि ऊँचे स्वर में होती है और जब धीमी गति से होता है तो ध्वनि नीचे सुर में होती है। इसी को सुर का ऊँचा या नीचा होना कहते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जब उच्चारण करता है तो उसके सुर की अपनी निम्नतम और अधिकतम सीमा होती है। प्रायः इसी के बीच उसके सुर का उतार-चढ़ाव होता है। सुर के उतार-

चढ़ाव को ही आरोह- अवरोह कहते हैं। आरोह-अवरोह की दृष्टि से सुर के मुख्य तीन भेद हैं - उच्च, मध्य या सम और निम्न। उच्च सुर को 'उदात्त', मध्य सुर को 'स्वरित' और निम्न सुर को 'अनुदात्त' कहा गया है। 'सुर' के बारे में अध्ययन करते समय 'सुर लहर' और 'सुर तान' के बारे में जानना भी जरूरी है क्योंकि इनका सम्बंध सुर से है।

सुर-लहर - दो या उससे अधिक सुरों का उतार-चढ़ाव या आरोह-अवरोह 'सुर लहर' कहलाता है। सुर लहर का निर्माण दो या दो से अधिक सुरों से होता है। स्पष्ट हैं कि सुर के दो रूप हैं। एक ध्वनि में यह 'सुर' है और सम्बद्ध ध्वनियों में एक से अधिक होने पर 'सुर लहर'।

सुर-तान - 'सुर' के समानार्थी रूप में तान का प्रयोग होता है किन्तु भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से दोनों में पर्याप्त अन्तर है। सुर (च्पजबी) हर घोष ध्वनि में होता है। जैसे 'गमला' शब्द की सभी ध्वनियाँ घोष हैं। इसे यदि स्वाभाविक सुर में बोले या अस्वाभाविक सुर में, 'गमला' शब्द के अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होगा। इसके विपरीत चीनी जैसी कुछ ऐसी भाषाएं हैं जहाँ सुर के बदलने से शब्द का अर्थ भी बदल जाता है। अतः शब्द का अर्थ बदलने वाला सुर तान (ज्वदम) कहलाता है। इसी आधार पर सुर के दो भेद किये गये हैं - सार्थक और निरर्थक। अर्थ भेदक सुर को सार्थक सुर या तान कहा गया और जहाँ वह अर्थ भेदक न हो अर्थात निरर्थक हो, उसे केवल सुर कहा गया।

4. संगम (Juncture) - आपने अनुभव किया होगा कि बोलते समय हम एक ध्वनि पूरी कर दूसरी ध्वनि का उच्चारण करते हैं। जैसे - 'तुम्हारे' शब्द में 'म्' के बाद सीधे 'ह्' आता है किन्तु 'तुम हारे' शब्द के उच्चारण से ऐसा नहीं होता। यहाँ 'म' के बाद 'ह' तुरन्त न आकर थोड़े ठहराव या मौन के बाद आता है। इसी मौन या विराम को 'संगम' कहते हैं। संगम सदैव शब्दों के बीच में आता है।

5. वृत्ति - बोलने में उच्चारण की गति महत्वपूर्ण होती है। उच्चारण की गति को ही 'वृत्ति' कहते हैं। वृत्ति के तीन भेद हैं। 1. द्रुत अर्थात उच्चारण की तेज गति 2. मध्यम और 3. विलम्बित अर्थात धीरे धीरे उच्चारण करना। सटीक उच्चारण और सटीक अर्थबोधन वृत्ति के सम्यक निर्वाह पर निर्भर होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ध्वनि प्रक्रिया को भली भाँति जानने समझने में ध्वनि गुणों का ज्ञान भी अपेक्षित है।

6.5 मानस्वर (Cardinal Vowel)

स्वर-विज्ञान में मानस्वरों की सकल्पना एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। मानस्वरों के अन्तर्गत आठ स्वरों को मानक स्वर माना गया है। जिनके द्वारा हम हिन्दी-अंग्रेजी सहित विश्व की किसी भी भाषा के स्वरों के उच्चारण का भाषा वैज्ञानिक आकलन कर सकते हैं। मानस्वरों की संकल्पना जिह्वा के कार्य पर आधारित है। जिह्वा, किस प्रकार के उच्चारण में ऊपर उठ कर मुख-विवर को संकरा (संवृत) बना देती है और किसका उच्चारण करते समय मुखविवर खुला (विवृत) या अधखुला (अर्ध विवृत) रहता है। कौन सा स्वर जिह्वा के अग्रभाग (जिह्वाग्र) से,

कौन सा मध्यभाग (जिह्वा मध्य) से और कौन सा पश्च (जिह्वापश्च) भाग से बोला जाता है। इसका भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण ही मास्वरों की अवधारणा का आधार है।

यद्यपि भारतीय वैयाकरणों ने अर्द्ध विवृत और अर्द्ध संवृत के नाम से स्वरों का वर्गीकरण बहुत पहले ही कर लिया था। उसी में अग्र और पश्च के विभाजन का संयोजन कर आधुनिक काल के भाषा वैज्ञानिक 'जान वेलिस' ने स्वरों के उच्चारण में जिह्वा की स्थिति का अध्ययन किया जो विवृत-संवृत और अग्र,मध्य,पश्च की भारतीय अवधारणा से बहुत कुछ मेल खाता है। कालान्तर में हेलबेग ने स्वरों का एक त्रिभुज बनाया जिसमें पाँच स्वर थे।

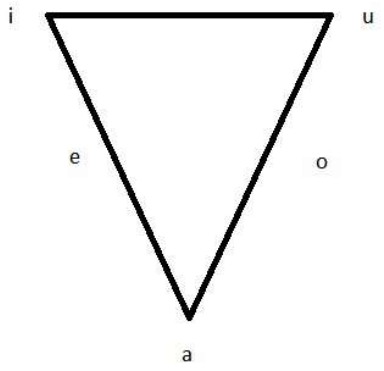

चित्र 5

(देखें चित्र) चित्र में दिये गए त्रिभुज में बायीं ओर की रेखा अग्र स्वरों की स्थिति की सूचक है और दायीओर की रेखा पश्च स्वरों की। ऊपर की रेखा जिह्वा के ऊपर उठने की स्थिति दिखलाती है और मुख्य विवर के संकरा होने का संकेत देती है जबकि नीचे की बिन्दु मुख विवर के खुला रहने का। इस त्रिभुज का स्वर-विज्ञान में भव्य स्वागत हुआ। यह इतना व्यापक रूप में लोकप्रिय हुआ कि बाद में भाषा वैज्ञानिक डैनियल जोन्स ने जो स्वर चतुर्भुज बनाया, उसे भी स्वर त्रिभुज ही कहा गया। आप जानते हैं कि स्वरों के उच्चारण में जीभ तालु के निकट एक खास ऊँचाई तक ही उठती है। उस खास ऊँचाई से होकर गुजरने वाली कल्पित स्वर रेखा कहलाती है। इसी रेखा पर आगे की ओर एक बिन्दु माना जा सकता है जहाँ तक जीभ का अग्र भाग अधिकतम जा सकता है। इसी बिन्दु पर मानस्वर 'ई' की स्थिति है। इसी प्रकार जीभ का पश्च भाग अधिक से अधिक एक खास बिन्दु तक उठ सकता है। इस बिन्दु पर मानस्वर 'ऊ' है। जिह्वा के अग्र भाग और पश्च भाग ऐसे ही नीचे एक खास बिन्दु तक जा सकते हैं जिन पर क्रम से मानस्वर 'अऽ' और 'आ' हैं। इस प्रकार ये चारों बिन्दु स्वर उच्चारण में जीभ की चार सीमाओं को प्रकट करते हैं। (देखें चित्र)

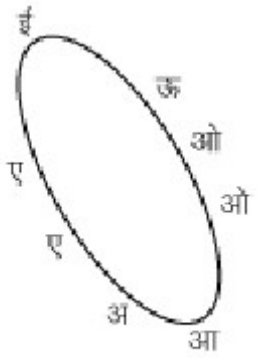

चित्र - 6

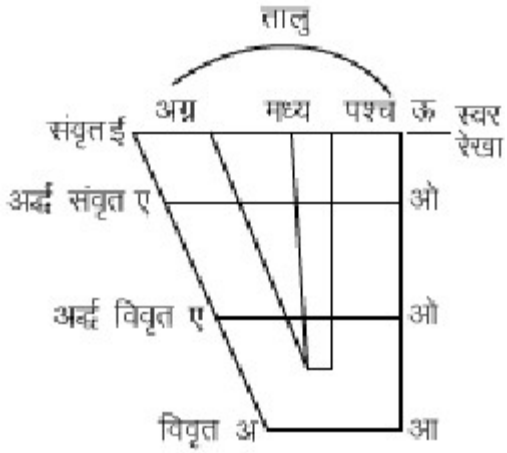

चित्र - 7

चित्र में अग्र, मध्य, पश्च से जीभ या मुँह के अग्र, मध्य और पश्च भाग देखे जा सकते हैं। इनके आधार पर स्वर को अग्र, पश्च या मध्य स्वर या विवृत-संवृत की श्रेणी में रखा जा सकता है। चतुर्भुज के मध्य या केन्द्र के आसपास के स्वर केन्द्रिय स्वर कहलाते हैं। इन चार बिन्दुओं के बीच आठ स्वर ही प्रमुख हैं। इन आठ स्वरों में ओष्ठों की आठ स्थितियाँ दिखायी गयी हैं। 'ई' में वे बिल्कुल फैले हुए होते हैं। ए, ऐ, अ में उनका फैलाव क्रमशः कम होता जाता है और आ, ऑ तथा ओ, ऊ में पूर्णतः गोलाकार हो जाते हैं।

संक्षेप में ओष्ठ, जिह्वा और मुख विवर की स्थिति के अनुसार इन आठ मानस्वरों की स्थिति इस प्रकार है -

ई	-	अवृतमुखी, अग्र, संवृत
स	-	अवृतमुखी, अग्र, अर्द्धसंवृत
सॅ	-	अवृतमुखी, अग्र, अर्द्धविवृत
अ	-	अवृतमुखी, अग्र, विवृत
आ	-	स्वल्पवृतमुखी, पश्च, विवृत
ऑ	-	स्वल्पवृतमुखी, पश्च, अर्द्धविवृत
ओ	-	वृतमुखी, पश्च, अर्द्धसंवृत
ऊ	-	पूर्णवृतमुखी, पश्च, संवृत

6.6 स्वनिम (Phonemics) स्वरूप और संकल्पना

ध्वनि विज्ञान (स्वन विज्ञान) की जिस शाखा में किसी भाषा विशेष के स्वनिमों (ध्वनिग्रामों) का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है, उसे 'स्वनिम विज्ञान' या 'ध्वनिग्राम विज्ञान' कहते हैं। 'स्वनिम' और 'ध्वनिग्राम' अंग्रेजी के Phonemics शब्द के हिन्दी पर्याय हैं। अतः यहाँ 'स्वनिम' शब्द का ही प्रयोग किया गया है क्योंकि फोनोमिक्स के लिए यह अधिकृत

पारिभाषिक शब्द है। स्वनिम विज्ञान आधुनिक पाश्चात्य भाषाविद् की देन है। सपीर जैसे कुछ भाषाविद् इसे मनोवैज्ञानिक इकाई मानते हैं तो ब्लूम फील्ड और डेनियल जोन्स इसे भौतिक इकाई मानने के पक्ष में हैं। इसी प्रकार स्वनिम विज्ञान को काल्पनिक और बीज गणितीय इकाई मानने वालों का भी अलग वर्ग है। वस्तुतः अध्ययन विश्लेषण की प्रकृति के अनुसार स्वन विज्ञान को अमूर्त काल्पनिक इकाई ही मानना अधिक तर्कसंगत है। डॉ भोलानाथ तिवारी का भी यही तर्क है कि भाषा में सहस्वन का ही प्रयोग होता है स्वनिम का नहीं। स्वनिम तो सहस्वनों के वर्ग या परिवार का प्रतिनिधि मात्र है। अतः वास्तविक सत्ता सहस्वनों की होती है, स्वनिम की नहीं। बोलचाल में आपने अनुभव किया होगा कि हम अनगिनत ध्वनियों का उच्चारण करते हैं, लेकिन ध्वनि विज्ञान की दृष्टि से किसी भी भाषा में पचास-साठ से अधिक ध्वनियाँ नहीं होती। उदाहरण के लिए यदि हिन्दी भाषा में कलम, कागज, किताब, कुर्सी, कृपा, कोमल, कौन, काँच, आदि शब्दों में आई 'क' ध्वनि को देखें तो स्पष्ट है कि प्रत्येक शब्द में 'क' ध्वनि का उच्चारण अलग-अलग है किन्तु मूल ध्वनि 'क' ही है अर्थात 'क' की विभिन्न ध्वनियाँ परस्पर भिन्न होते हुए भी काफी समानता रखती हैं। अतः 'क' मूल ध्वनि की इन विभिन्न ध्वनियों को एक परिवार की संज्ञा दी जा सकती है जैसे 'क' परिवार। ध्वनियों के इस परिवार को ही स्वनिम (Phonemics) या ध्वनिग्राम कहते हैं।

स्वनिम शब्द संस्कृत के 'स्वन' धातु से बना है जिसका अर्थ है ध्वनि करना। अनेक भाषाविदों ने स्वनिम की परिभाषा निम्नलिखित रूप से दी है -

1. स्वनिम उच्चारित भाषा का वह न्यूनतम रूप है जो दो ध्वनियों का अन्तर प्रकट करता है। - आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा
2. स्वनिम मिलती-जुलती ध्वनियों का परिवार होता है। - डेनियल जोन्स
3. ध्वनिग्राम या स्वनिम समान ध्वनियों का समूह है जो किसी भाषा विशेष के उसी प्रकार के अन्य समूहों से व्यतिरेकी होता है। - ब्लाक और ट्रेगर
4. स्वनिम किसी भाषा अथवा बोली में समान ध्वनियों का समूह है। - ग्लीसन
5. 'संक्षेप में स्वनिम किसी भाषा की वह अर्थ भेदक ध्वन्यात्मक इकाई है जो भौतिक यर्थाथ न होकर मानसिक इकाई होती है।' - भोलानाथ तिवारी

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर स्वनिम की निम्नलिखित विशेषताएं स्पष्ट होती हैं -

1. **स्वनिम** किसी भाषा विशेष से सम्बद्ध रखते हैं। इस रूप में वे भाषा विशेष की लघुतम अखण्ड इकाई हैं। अलग-अलग भाषाओं के स्वनिम भी भिन्न होते हैं जिनका आपस में सम्बंध नहीं होता। जैसे हिन्दी का कोमल तालु का स्वनिम 'क' अरबी के काकल 'क़' से भिन्न है। इसी तरह से ध्वनि की दृष्टि से भाषा विशेष के स्वनिम परस्पर नहीं मिलते। जैसे काना, गाना, शब्द में 'क'और 'ग' ध्वनि के स्तर पर भिन्न स्वनिम है। कोई भी भाषा जब विदेशी भाषा के शब्दों को ग्रहण करती है तो उन्हें अपनी भाषा की ध्वनि प्रकृति के अनुसार ग्रहण करती है। अरबी-फारसी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं के अनेक शब्द हिन्दी की प्रकृति के अनुसार ढल गये हैं। जैसे किताब, कानून, गबन, आलमारी रिक्शा आदि शब्दों के स्वनिम अब हिन्दी के

स्वनिम बन गए हैं। अंग्रेजी के आफिस, ट्रेक्टर, हॉस्पिटल, बैंक शब्दों की 'आ' और 'अ' ध्वनियों को हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप ढाल लिया गया है। इस प्रकार विदेशी शब्दों में हिन्दी के स्वनिमों का ही प्रयोग होता है।

2. स्वनिम अर्थभेदक इकाई है। उनमें अर्थ भेद उत्पन्न करने की पूर्ण क्षमता होती है किन्तु स्वयं वे अर्थहीन हैं। जैसे 'काली' और 'गाली' शब्द को देखें। इनमें 'क', और 'ग', के अतिरिक्त 'ल' समान ध्वनि हैं। इसका उच्चारण समान है और समान क्रम में आयी है। उच्चारण स्थान और आभ्यंतर प्रयत्न की दृष्टि से भी दोनों समान हैं। अंतर यही है कि 'क' घोष है और 'ग' अघोष है जिसके कारण दोनों शब्दों के अर्थ भिन्न हो गये हैं। इसी तरह ताल-दाल, तन-धन, टालना-डालना आदि शब्दों से स्वनिम का अर्थभेदक क्षमता को समझा जा सकता है।

3. स्वनिम का सम्बंध भाषा के केवल उच्चारित रूप से होता है, लिखित रूप से नहीं क्योंकि स्वनिम का सम्बंध 'ध्वनि' अर्थात उच्चारित की गई ध्वनि से है।

4. स्वनिम में एक से अधिक उपस्वन होते हैं। जैसे - ला, लोटा, लेना, ली आदि शब्दों में चार उपस्वन हैं। इनका स्वनिम एक है - 'ल'। 'ल' स्वनिम परिवार के चार सदस्य हैं - ल1 ल2 ल3 ल4।

संक्षेप में स्वनिम की विशेषताओं को इस प्रकार समझा जा सकता है -

1. स्वनिम भाषा विशेष की लघुतम अखण्ड इकाई है।
2. स्वनिम का सम्बंध उच्चारित भाषा से है लिखित से नहीं।
3. स्वनिम समान भाषा ध्वनियों का समूह है।
4. स्वनिम भाषा की अर्थभेदक इकाई है।
5. स्वनिम में एक या एक से अधिक सहस्वन होते हैं।

सहस्वन (Allophone) - अंग्रेजी के 'एलोफोन' के लिए हिन्दी में 'सहस्वन', 'संध्वनि', 'उपस्वन' शब्द प्रचलित हैं। यहाँ 'सहस्वन' का ही प्रयोग किया गया है। आपने देखा होगा कि हम दैनिक जीवन में असंख्य ध्वनियों का उच्चारण करते हैं। एक व्यक्ति का उच्चारण भी सदा समान नहीं होता। अतः दो व्यक्तियों के उच्चारण में अंतर आना स्वाभाविक है। सहस्वन का सम्बंध ध्वनियों के उच्चारण से है। इसे निम्नलिखित उदाहरण से समझा जा सकता है -

हिन्दी में 'ल' एक ध्वनि है। यदि हम 'उलटा', 'लो', 'ले' तथा 'ला' - इन चार शब्दों का सावधानी से उच्चारण करते समय जीभ की स्थिति पर ध्यान दें तो स्पष्ट हो जायेगा कि ल1 (उलटा) के उच्चारण में जीभ उलट जाती है। ल2 (लो) दाँत की ओर थोड़ा आगे की ओर जीभ करके उच्चारित होता है। ल3 (ले) में जीभ के आगे से और ल4 (ला) और भी आगे से उच्चारण होता है। अर्थात 'ल' ध्वनि के चार शब्दों में चार सदस्य हैं - ल1, ल2, ल3, ल4। चारों के उच्चारण स्थान एक दूसरे से भिन्न हैं। 'ल' के विभिन्न रूपों के आधार पर उसे मुखिया और विभिन्न रूपों को उस परिवार के सदस्य के रूप में मान लें तो 'ल' स्वनिम है तथा ल1, ल2, ल3, ल4 उसके सहस्वन हैं। स्वनिम 'ल' की सत्ता मानसिक है और ल1, ल2, ल3, ल4 की सत्ता भौतिक है क्योंकि सहस्वन का ही वास्तविक रूप में उच्चारण और श्रवण किया जाता

है। भोलानाथ तिवारी ने स्वनिम को जाति और सहस्वन को व्यक्ति कहा है। सहस्वन स्वनिम परिवार के सदस्य हैं। स्वनिम विज्ञान में इनको प्रदर्शित करने के लिए विशेष चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। स्वनिम को दो खड़ी रेखाओं के बीच तथा सहस्वन को दो कोष्ठक के बीच प्रदर्शित करते हैं। जैसे -

। ल। - {ल1}। {ल2}। {ल3}। {ल4}

एक स्वनिम के सहस्वन परस्पर परिपूरक वितरण में आते हैं। जैसे आप, रूप, पढ़, और अपढ़ - इन चार शब्दों को देखें। इनमें 'प' दो हैं - एक स्फोटित और दूसरा अस्फोटित। अस्फोटित 'प' शब्द के आदि (पढ़) या मध्य (अपढ़) में आता है। ऐसी स्थिति को 'परिपूरक वितरण' कहते हैं अर्थात वितरण में वे एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों के स्थान अलग-अलग हैं। दोनों में विरोध नहीं है। इसके विपरीत स्वनिम व्यक्तिरेकी वितरण में आते हैं। प्रत्येक स्वनिम का स्थान सुनिश्चित होता है। किसी प्रकार के अतिक्रमण की कोई सम्भावना नहीं होती। जहाँ एक स्वनिम का प्रयोग होता है, वहाँ उसी अर्थ में दूसरे का प्रयोग नहीं हो सकता।

6.6.1 स्वनिम के भेद

स्वनिम दो प्रकार के होते हैं - खंड्य और खंड्येतर। खंड्य स्वनिम वे ध्वनियाँ हैं जिनका पृथक एवं स्वतंत्र उच्चारण सम्भव है। इनका स्वतंत्र अस्तित्व भी होता है। खंड्य स्वनिम में स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ आती हैं। ये निम्नलिखित हैं -

स्वर	-	अ आ इ ई ए ऐ ओ औ उ ऊ
व्यंजन	-	क ख ग घ ङ
		च छ ज झ ´
		ट ठ ड ढ ण
		त थ द ध न
		प फ ब भ म
		य र ल व
		स श ष ह
		ड़ ढ़
		क़ ख़ ग़ ज़ फ़

खंड्य स्वनिम के संदर्भ में कुछ बातें दृष्ट्व्य हैं -

1. यहाँ दी गई स्वर-व्यंजन ध्वनियों में स्वर में ऋ, अं, अः तथा व्यंजन में क्ष, त्र, ज्ञ नहीं दिए गये हैं। क्योंकि उच्चारण में ये एक ध्वनि न होकर संयुक्त ध्वनियाँ हैं।

2. हिन्दी में फारसी ध्वनियों (क़ ख़ ग़ ज़ फ़) का बोलने लिखने में प्रचलन बढ़ा है। अतः व्यंजन के अन्तर्गत उन्हें भी स्वतंत्र ध्वनि के रूप में रखा गया है। इसी प्रकार अंग्रेजी की

'ऑ' ध्वनि को भी स्वर-ध्वनियों में शामिल किया जा सकता है। इसका प्रयोग अंग्रेजी शब्दों जैसे डॉक्टर, हॉस्पिटल, कॉलेज आदि में होता है।

3. ड़ और ढ़ दोनों स्वतंत्र ध्वनियाँ मानी गयी हैं। यद्यपि पहले ये ड और ढ स्वनिम के सहस्वन थे। अब इन्हें स्वतंत्र स्वनिम माना जाता है।

खंड्येतर स्वनिम स्वतंत्र रूप में नहीं आ सकते। वे खंड्य स्वनिमों पर ही आधारित होते हैं। ये निम्नलिखित हैं -

बलाघात - मुझे एक रुपया दो।
मुझे एक रुपया दो।
मुझे एक रुपया दो।

यहाँ प्रत्येक वाक्य में अलग-अलग शब्दों पर बलाघात होने से वाक्य का विशेष अर्थ व्यक्त होता है।

सुर लहर - वह मर गया। सामान्य अर्थ
वह मर गया ? प्रश्नवाचक अर्थ
वह मर गया ! विस्मयबोधक अर्थ

सुर-लहर के कारण एक ही वाक्य की अलग-अलग अर्थ-व्यंजना होती है।

अनुनासिकता - अनुनासिकता से भी अर्थ-भेद उत्पन्न होता है। जैसे - गोद-गोंद, काटा-काँटा, सवार-सँवार आदि।

संगम - ये न्यूनतम विरोधी युग्म के उदाहरण हैं। जैसे तुम हारे-तुम्हारे, हो ली-होली आदि।

इस तरह बलाघात, सुरलहर, अनुनासिकता, मात्रा, संगम आदि खंड्येतर स्वनिम के अन्तर्गत आते हैं।

6.62 स्वनिम विश्लेषण की विधि

शब्द संचयन - सर्वप्रथम जिस भाषा का अध्ययन-विश्लेषण करना होता है, उसके शब्दों को एकत्र करते हैं। जीवित भाषा के शब्दों को उस भाषा के बोलने वाले व्यक्ति से सुनकर शब्द एकत्र किये जाते हैं। बोलने वाले व्यक्ति को 'सूचक' कहते हैं। सूचक के लिए ये आवश्यक है कि वह भाषा को अधिक से अधिक स्वाभाविक रूप में बोल सके। उसका उच्चारण बाहरी प्रभाव से मुक्त हो। यदि भाषा जीवित नहीं है तो उसके लिखित साहित्यिक रूपों से शब्दों को एकत्र किया जाता है।

ध्वन्यात्मक लेखन - शब्दों का ध्वन्यात्मक लेखन दो प्रकार से होता है -

1. स्थूल प्रतिलेखन 2. सूक्ष्म प्रतिलेखन

किसी भी भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन-विश्लेषण में सूक्ष्म प्रतिलेखन की विधि अपनायी जाती है। इसका मूल आधार स्थूल प्रतिलेखन के लिपि चिह्न ही होते हैं किन्तु इसमें सूक्ष्म से सूक्ष्म बातों को भी देखा जाता है। स्थूल प्रतिलेखन में केवल स्वनिमों को लिखा जाता है किन्तु सूक्ष्म प्रतिलेखन में सहस्वनों का भी उल्लेख किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें बलाघात,

सुर आदि का भी विवेचन होता है। संक्षेप में सूक्ष्म प्रतिलेखन में निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना पड़ता है -

(क) स्वरध्वनि - यदि कोई ध्वनि स्वर है तो वह (1) सामान्य या अघोष है। (2) ह्स्व या दीर्घ है। (3) संवृत या विवृत है। (पअ) अग्र, पश्च या मध्य है। (4) अनुनासिक है। (5) मर्मर है। (6) विशेष सुर या बलाघात से युक्त है। (7) अनाक्षरिक तो नहीं है, यदि है तो कितना। (8) स्थान या प्रयत्न की दृष्टि उसका क्या रूप है। (9) वृतमुखी या अवृतमुखी है आदि बातों को देखना होता है।

(ख) व्यंजन - यदि ध्वनि व्यंजन है तो (1) कंठ्य, तालव्य आदि में उसका स्थान क्या है। (2) क्या वह अपने मूल रूप में या भिन्न रूप में उच्चारित है। (3) प्रयत्न की दृष्टि से उसकी क्या स्थिति है। (4) वृतमुखी है या अवृतमुखी। (5) स्पर्श पूर्ण है या अपूर्ण, स्फोटित या अस्फोटित तो नहीं। (6) अनुनासिक है या नहीं। (7) आक्षरिक है या अनाक्षरिक आदि बातों को ध्यान में रखना होता है।

सूक्ष्म प्रतिलेखन के पश्चात संकलित शब्दों के आधार पर उनमें प्रयुक्त ध्वनियों का चार्ट बनाते हैं। वस्तुतः यह चार्ट समस्त सहस्वनों का होता है। अब यह देखा जाता है कि इसमें कितने स्वनिम हैं और कितने सहस्वन। कौन-सा सहस्वन किस स्वनिम (जाति) में रखा जायगा, इसके सामान्य रूप में तीन नियम हैं - वितरण, समानता और कार्यगत एकरूपता। ये तीन गुण जिन ध्वनियों में प्राप्त होते हैं, वे एक वर्ग की ध्वनियाँ होती हैं। वितरण में यह भी देखा जाता है कि ध्वनियाँ किन परिस्थितियों में आयी हैं। जिन परिस्थितियों में एक ध्वनि प्रयुक्त होती है, उसी में दूसरी ध्वनि प्रयुक्त नहीं होती। समानता में स्थान और प्रयत्न की समानता देखी जाती है। स्थान और प्रयत्न की विषमता होने पर स्वनिमों में भी भिन्नता होती है। कार्यरूपता से आशय यह है कि यदि कार्य में फर्क है तो पूरक और सहायक होने पर भी उसे अन्य स्वनिम माना जायगा।

6.7 स्वनिम के सम्बंध में सहायक सिद्धान्त

स्वनिम के अध्ययन के संदर्भ में निम्नलिखित सिद्धांत सहायक हो सकते हैं -

1. वितरण का सिद्धान्त - भाषा के स्वनिम और सहस्वन के अध्ययन में वितरण का सिद्धान्त सर्वाधिक विश्वसनीय आधार है। स्वनिम विज्ञान के नियमानुसार जो ध्वनियाँ परिपूरक वितरण के अन्तर्गत आती हैं, उन्हें एक ही स्वनिम के सहस्वन के रूप में रखना चाहिए। इसके विपरीत जो ध्वनियाँ व्यतिरेकी वितरण में आयें उन्हें स्वतंत्र स्वनिम के रूप में रखना चाहिए। परिपूरक वितरण का स्वरूप सहअस्तित्व की भावना के समान है। जैसे - एक परिवार के विविध सदस्य परस्पर विरोधी नहीं होते, उसी प्रकार सहस्वन भी एक दूसरे के अविरोधी होते हैं। उसके अपने क्षेत्र निर्धारित और सुनिश्चित होते हैं।

इसके विपरीत स्वनिम व्यतिरेकी होते हैं अर्थात वे एक दूसरे के पूरक नहीं होते। जैसे - 'काली' और 'गाली' शब्द में 'क' और 'ग' स्वनिम एक दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। यही इनकी अर्थ भेदकता का आधार है।

2. ध्वन्यात्मक समानता का सिद्धान्त - जैसा कि आप जानते हैं कि ध्वनि विज्ञान में अभ्यंतर प्रयत्न और बाह्य प्रयत्न के आधार पर स्वर-व्यंजन के स्वरूप निर्धारित किए जाते हैं। स्वनिम के निर्धारण में यही सर्वाधिक मान्य और विश्वसनीय कसौटी है। इसके अनुसार समान उच्चारण स्थान और समान प्रयत्नों द्वारा उच्चारित दो ध्वनियों को एक ही स्वनिम परिवार का सहस्वन माना जा सकता है। स्थान और प्रयत्न में से किसी एक के भिन्न होने पर भिन्न उच्चारण होता है। इस आधार पर स्वनिम भी भिन्न हो जाता है। उदाहरण के लिए कान, नकल और अंकित शब्दों की 'क' ध्वनि को देखें। इनमें प्रयुक्त क1, क2 और क3 के उच्चारण में अन्तर होने के बावजूद ये तीनों कोमल तालव्य, अघोष और अल्पप्राण स्पर्श ध्वनियाँ हैं। इस कारण ये तीन सहस्वन हैं, भिन्न स्वनिम नहीं।

इसके विपरीत काली, गाली, खाली, शब्दों में प्रयुक्त क, ग, ख ध्वनियाँ भिन्न-भिन्न स्वनिम हैं क्योंकि कोमल तालव्य होने के बावजूद वे बाह्य प्रयत्न की दृष्टि से भिन्न है। 'क' अघोष अल्पप्राण है, 'ख' अघोष महाप्राण तथा 'ग' घोष महाप्राण है।

3. ध्वन्यात्मक संदर्भ का सिद्धान्त - इस सिद्धान्त के अनुसार जो स्वन शब्द के आदि, मध्य और अंत में सभी ध्वन्यात्मक संदर्भों में आए उसे सहस्वन मानना चाहिए। हिन्दी के अनुनासिक व्यंजनों की इस कसौटी पर जाँचें तो निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं -

'न' व्यंजन -

शब्द के आदि में	-	नर, नाक, नीर, नीम
शब्द के मध्य में	-	अनेक, अनामिका, अनिश्चित, अनहद
शब्द के अंत में	-	पवन, दमन, दिन, दान
स्वरों के साथ	-	नर (अ), नाम (आ), निर्भय (इ), नीला (ई), नुकसान (उ), नेह (ए), नैहर (ऐ), नोंक (ओ), नौका (औ)
संयुक्त व्यंजन में	-	न्याय, अन्वेषण, आसन्न

'म' व्यंजन -

शब्द के आदि में	-	मछली, मकान, माया, मोह
शब्द के मध्य में	-	समान, अमीन
शब्द के अंत में	-	सोम, काम, नीम
स्वरों के साथ	-	मत (अ), माल (आ), मिलन (इ),

		मीत (ई), मूक (उ), मेल (ए), मैल (ऐ), मोल (ओ), मौसम (औ)
संयुक्त व्यंजन में	-	म्लान, साम्य, काम्य
द्वित्व व्यंजन में	-	सम्मान, सम्मेलन, सम्मोहन
'ण' व्यंजन -		
शब्दों के आदि में	-	प्रयोग नहीं होता है।
शब्दों के मध्य में	-	परिणय, प्रणय, प्रणाम
शब्द के अंत में	-	दर्पण, श्रवण, क्षण
अनुस्वर के विकल्प के रूप में		कण्ठ, मण्डल, पण्डाल

नासिक्य व्यंजनों में 'ङ' तथा 'भ' का प्रयोग वाङ्मय, चञ्चल, प्रत्यञ्चा आदि में सीमित रूप में होता है। इस प्रकार इन नासिक्य व्यंजनों को 'न' स्वनिम का सहस्वन माना जा सकता है।

4**. ध्वन्यात्मक ढाँचे का सिद्धान्त** - हर भाषा का अपना ध्वन्यात्मक ढाँचा होता है जिसके आधार पर उसके भाषा के स्वनिम निर्धारित कर सकते हैं। जैसे हिन्दी में स्वर-व्यंजन है। प्रत्येक व्यंजन में उच्चारण स्थान के आधार पर कवर्ग, को कोमल तालव्य, चवर्ग को तालव्य, टवर्ग को मूर्धन्य, तवर्ग को दंत्य और पवर्ग ओष्ठ्य है। इसके बाद य तालव्य, 'र' 'ल' वर्त्स्य, 'व' दंत्योष्ठ, 'श', 'ष' तालव्य, 'स' मूर्धन्य और 'ह' कंठ्य है। इस तरह हिन्दी ध्वनियों का एक सुव्यवस्थित ढाँचा है। इस सिद्धान्त से हिन्दी भाषा से अपरिचित व्यक्ति भी भाषा में स्वनिमों की पहचान कर सकता है। यद्यपि ध्वन्यात्मक ढाँचे का सिद्धान्त ध्वन्यात्मक समानता के सिद्धान्त की तरह पूरी तरह से विश्वसनीय नहीं माना गया है।

5. अधिक भेद और अभेद का सिद्धान्त - यह एक व्यावहारिक सिद्धान्त है। इसे मितव्ययता का सिद्धान्त भी कहा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार स्वनिमों के निर्धारण में यह सावधानी रखने की आवश्यकता होती है कि हम किसी सहस्वन को स्वनिम मानकर उसके अधिक भेद न निर्धारित कर लें अथवा किसी स्वनिम को सहस्वन मानकर स्वनिम के कम भेद न बना लें। इस सिद्धान्त का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें अध्ययनकर्ता के विवेक को अधिक महत्व देते हुए स्वनिम निर्धारण की
कोई सर्वमान्य मानक कसौटी नहीं प्रस्तुत की गई है।

6.8 सारांश

इस इकाई से आपको ध्वनि-प्रक्रिया के विविध आयामों का ज्ञान हुआ। ध्वनि-प्रक्रिया में ध्वनि का उच्चारण वागवयवों द्वारा होता है। वागवयव ही ध्वनि साधन हैं। आपने चित्र की सहायता से वाग्यंत्र और उसके विविध अवयवों को अच्छी तरह से समझा तथा उनकी कार्य प्रक्रिया और उनके द्वारा किन-किन स्वर-व्यंजन ध्वनियों का कैसे उच्चारण होता है, यह भी जाना। श्रवण यंत्र परोक्ष रूप से ध्वनि प्रक्रिया के अन्तर्गत ही समझना चाहिए क्योंकि इसके द्वारा

हम उच्चारण से उत्पन्न ध्वनि को सुन और समझ सकते हैं। किसी भी भाषा में मात्रा, बलाघात, सुर, सुरतान और सुर लहर के रूप में ध्वनि गुण विद्यमान होते हैं। ये ध्वनि-गुण ध्वनि, अक्षर, शब्द और वाक्य में होते हैं जिनके द्वारा शब्द या वाक्य की अर्थ व्यंजना में विशिष्टता आती है। आपने मानस्वरों के बारे में चित्रों की सहायता से यह भी जाना कि मानस्वर क्या हैं और उनके निर्धारण के क्या नाजुक मानक हैं। 'स्वनिम' आधुनिक भाषा विज्ञान की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। स्वनिम समान ध्वनियों का समूह है जो भाषा की लघुतम अखण्ड इकाई होने के साथ ही अर्थभेदक इकाई भी है। इसका सम्बंध केवल भाषा के उच्चारित रूप से होता है। स्वनिम में एक या एक से अधिक सहस्वन होते हैं। इस तरह सहस्वन स्वनिम परिवार के सदस्य के रूप में होते हैं। दूसरे शब्दों में, स्वनिम यदि 'जाति' है तो सहस्वन 'व्यक्ति'। सहस्वन परिपूरक विवरण में आते हैं जबकि स्वनिम व्यतिरेकी विवरण में। स्वनिम के दो भेद हैं - खण्ड्य और खण्ड्येतर। स्वर-व्यंजन खण्ड्य स्वनिम है। इसका स्वतंत्र अस्तित्व है। बलाघात, सुर लहर मात्रा, अनुनासिकता, संगम, वृत्ति आदि खण्ड्येतर स्वनिम में आते हैं। स्वनिम विश्लेषण विधि के अन्तर्गत शब्द संचयन के बाद ध्वन्यात्मक लेखन होता है। स्वनिम निर्धारण के संदर्भ में कतिपय सहायक सिद्धान्तों की भी इस इकाई में विस्तार से चर्चा की गई है। इन सिद्धान्तों में वितरण का सिद्धान्त, ध्वन्यात्मक समानता का सिद्धान्त, ध्वन्यात्मक संदर्भ का सिद्धान्त, ध्वन्यात्मक ढाँचे का सिद्धान्त आदि प्रमुख सिद्धान्त हैं।

6.9 पारिभाषिक शब्दावली

स्वरयंत्र	-	ध्वनि उच्चारण का प्रधान अंग
काकल	-	स्वर यंत्र मुख
अलिजिह्व	-	कौवा
कोमल तालु	-	चल वागवयव
मूर्धा	-	कठोर तालु के पीछे का अंतिम भाग
श्रवण यंत्र	-	कान
मात्रा	-	उच्चारण में लगने वाला समय
प्लुत	-	दीर्घ मात्रा से भी अधिक समय की मात्रा
सुर लहर	-	सुर का उतार-चढ़ाव जिससे शब्द और वाक्य में अर्थभेद होता है
वृत्ति	-	उच्चारण की गति

मानस्वर	-	संवृत-विवृत और अग्र,मध्य, पश्च पर आधारित स्वर मानस्वर कहे गये। ये आठ हैं।
स्वनिम	-	समान ध्वनियों का समूह
सहस्वन	-	स्वनिम परिवार की सदस्य ध्वनि
खण्ड्य स्वनिम	-	स्वर और व्यंजन
खण्ड्येतर स्वनिम	-	बलाघात, मात्रा, सुर, संगम आदि
व्यतिरेकी	-	परस्पर पूरक न होना
परिपूरक	-	अविरोधी
अनुनासिक	-	नासिका की सहायता से उच्चारित ध्वनि

6.10 अभ्यास प्रश्न एवं उत्तर

लघु उत्तरी प्रश्न -

1. बलाघात को सोदाहरण समझाइए।
2. मानस्वर का सचित्र परिचय दीजिए।
3. 'सुर' और 'सुरतान' पर टिप्पणी लिखिए।
4. 'स्वनिम' और 'सहस्वन' में अन्तर बताइए।
5. खण्ड्य स्वनिम के उदाहरण लिखिए।
6. खण्डेयतर स्वनिम को सोदाहरण समझाइए।
7. वितरण का सिद्धान्त समझाइए।
8. ध्वन्यात्मक संदर्भ का सिद्धान्त का उदाहरण दीजिए।
9. जिह्वा द्वारा किन ध्वनियों का उच्चारण कैसे और किस भाग से होता है ?
10. ध्वनि गुण में मात्रा का क्या अर्थ है ?

सही/गलत वाक्य पर निशान लगाइए -

1. कोमल तालु से अ, इ, स्वर उच्चारित होते हैं। सही/गलत
2. अभिकाकल का ध्वनि उच्चारण से प्रत्यक्ष सम्बंध है। सही/गलत
3. स, ज, र, ल वर्त्स्य ध्वनियाँ हैं।सही/गलत
4. मानस्वर आठ हैं। सही/गलत
5. खण्ड्य स्वनिम स्वतंत्र नहीं होते।सही/गलत

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए -

1. कोमल तालु ..... वागवयव है।(सचल/अचल)
2. 'स' का उच्चारण ..... से होता है।(जिह्वानोक/जिह्वाफलक)
3. स्वनिम ..... वितरण में आते हैं।(परिपूरक/व्यतिरेकी)

4. स्वर व्यंजन पर पड़ने वाला बलाघात .....है।(अक्षरबलाघात/ध्वनि बलाघात)
5. स्वर चतुर्भुज को बनाने वाले ..... है। (डैनियल जोन्स/हैलेबेग)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

1. इनमें से कौन अचल (स्थिर) वागवयव है ?
   (अ) कोमल तालु (ब) कठोर तालु (स) जिह्वा (द) अलिजिह्वा
2. निम्न में से वर्त्स्य ध्वनियाँ कौन सी है ?
   (अ) स, ज, ल (ब) प, य, म (स) ट, ठ, ण (द) क, ख, ग
3. उच्चारण की गति को कहते हैं ?
   (अ) मात्रा (ब) सुर (स) संगम (द) वृत्ति
4. मानस्वरों की संख्या कितनी है ?
   (अ) पाँच (ब) सात(स) आठ (द) नौ
5. स्वनिम की कौन सी विशेषता नहीं है ?
   (अ) अर्थ भेदक इकाई (ब) समान ध्वनियों का समूह
   (स) परिपूरक वितरण में आते हैं (द) लघुतम अखण्ड इकाई

उत्तर -

सही/गलत वाक्य -

1. सही 2. गलत 3. सही 4. सही 5. गलत

रिक्त स्थानों की पूर्ति -

1. चल 2. जिह्वानोक 3. व्यतिरेकी 4. ध्वनि बलाघात 5. डैनियल जोन्स

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

1. (ब) 2. (अ) 3. (द) 4. (स) 5. (स)

6.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

I. डॉ भोलानाथ तिवारी,भाषा विज्ञान, किताब महल, पटना
II. डॉ राजमणि शुक्ला,आधुनिक भाषा विज्ञान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
III. डॉ तेजपाल चौधरी,भाषा और भाषा विज्ञान, विकास प्रकाशन, कानपुर
IV. कामता प्रसाद गुरू,हिन्दी व्याकरण, लोक भारती, इलाहाबाद

6.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. वागवयवों का परिचय देते हुए उनके कार्य बताइए तथा बताइए कि ध्वनि गुण क्या हैं ? इनके विभिन्न रूपों का परिचय दीजिए।
2. मानस्वर की संकल्पना समझाते हुए स्वनिम के स्वरूप और प्रकृति पर प्रकाश डालिए।

इकाई 7 रूप विज्ञान

इकाई की रूपरेखा
7.2 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.3 रूप : संरचना और अवधारणा
7.3.1 शब्द और रूप
7.3.2 सम्बंध तत्व और अर्थतत्व
7.4 रूप-परिवर्तन
7.4.1 रूप-परिवर्तन की दिशाएं
7.4.2 रूप-परिवर्तन के कारण
7.5 रूपिम और संरूप
7.6 रूपिम के प्रकार्य
7.7 रूपिम निर्धारण पद्धति
7.8 रूप स्वनिम विज्ञान
7.9 सारांश
7.10 पारिभाषिक शब्दावली
7.11 अभ्यास प्रश्न
7.12 सन्दर्भ ग्रंथ
7.13 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

आप सामान्य रूप से परिचित हैं कि वाक्य शब्दों से मिलकर बनते हैं और एक या अधिक अक्षरों से मिलकर शब्द बनता है। दैनिक जीवन में हम अपनी भाषा में अनेक शब्दों का प्रयोग करते हैं। रूप संरचना का सम्बंध शब्द से है। भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से शब्द और रूप में अन्तर है। शब्द का मूल रूप जिसे हम स्वतंत्र शब्द कह सकते हैं - 'प्रतिपादिक' या 'प्रकृति' कहलाता है। वाक्य में प्रयुक्त शब्द अन्य शब्दों के साथ सम्बंध बताने वाले प्रत्यय से युक्त होता है - यही शब्द 'रूप' है। इसे 'पद' भी कहा जाता है। इस प्रकार 'शब्द' और 'रूप' सामान्य बोलचाल में एक से लगते हुए भी भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से उनमें पर्याप्त अन्तर होता है।

प्रत्येक शब्द का अपना निश्चित अर्थ होता है क्योंकि सार्थक ध्वनि ही शब्द कहलाती है। इस प्रकार प्रत्येक शब्द अर्थतत्व से संयुक्त होता है। वाक्य का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व सम्बंधतत्व है। सम्बंधतत्व के कारण ही शब्द अपने अर्थतत्व से परस्पर सम्बंध को अभिव्यक्त

कर वाक्य का सम्पूर्ण अर्थ देते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि सम्बंधतत्व भाषा की वह प्रक्रिया है जो प्रतिपादिक या मूल शब्द के पहले से निहित अर्थ को वाक्य के सम्दर्भ में पूर्ण रूप से अभिव्यक्त कर देती है।

ध्वनि-परिवर्तन की तरह रूप-परिवर्तन भी होता है किन्तु रूप-परिवर्तन का क्षेत्र ध्वनि-परिवर्तन की अपेक्षा सीमित है। रूप-परिवर्तन होने पर पुराने रूपों का लोप हो जाता है और नए रूप प्रचलित हो जाते हैं। कभी-कभी नए रूपों के साथ पुराने रूप भी चलते रहते हैं। इसलिए भाषा में एक ही अर्थ देने वाले कई रूप प्रचलित हो जाते हैं। रूप-परिवर्तन कुछ निश्चित दिशाओं में होता है और इसके विभिन्न कारण हैं जिनका अध्ययन आप 'रूप-परिवर्तन की दिशाएं और कारण' शीर्षक में कर सकेगें। 'रूपिम विज्ञान' के अध्ययन में आप 'रूपिम' और 'संरूप' की अवधारणा को समझ सकेगें। भाषा या वाक्य की लघुतम सार्थक इकाई 'रूपिम' है जिसका सम्बंध व्याकरण से है। रचना और प्रयोग की दृष्टि से रूपिम के चार भेद हैं - मुक्त, बद्ध, बद्धमुक्त और संयुक्त रूपिम। अर्थ और कार्य के आधार पर रूपिम के दो भेद - 'अर्थदर्शी' और 'सम्बंधदर्शी' रूपिम किए गए हैं। रूपिम भाषा की सार्थक इकाई होने के साथ ही वाक्य संरचना का व्याकरणिक आधार भी है। रूपिम निर्धारण की विशिष्ट भाषा वैज्ञानिक पद्धति है। रूपिम और संरूप के निधारण का सम्बंध उच्चारित भाषा से है। रूपस्वनिम विज्ञान अथवा रूप-ध्वनिग्राम विज्ञान रूप विज्ञान की ही एक विशिष्ट शाखा है। इसके अन्तर्गत उन ध्वन्यात्मक परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है जो दो या दो से अधिक रूपों या रूपग्रामों के मिलने पर दिखाई देते हैं। प्रायः रूपस्वनिम विज्ञान को 'संधि' के निकट मानते हैं किन्तु संधि की अपेक्षा यह विस्तृत और सूक्ष्म भाषा वैज्ञानिक अध्ययन का विषय है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

1. रूप की भाषा वैज्ञानिक संरचना और अवधारणा से परिचित होकर सामान्य शब्द से उसके अन्तर को समझ सकेगें।
2. रूप की संरचना में निहित अर्थतत्व और सम्बंध तत्व को पहचान कर उनके अन्तर्सम्बंध को जान सकेगें।
3. रूप परिवर्तन के कारण और दिशाओं को समझ सकेगें।
4. रूपिम और संरूप की भाषा वैज्ञानिक अवधारणा को समझकर और वाक्य संरचना में इनके महत्व को जान सकेगें।
5. रूपिम और संरूप की निर्धारण की पद्धति का अध्ययन कर सकेगें।
6. रूपस्वनिम विज्ञान से सामान्य परिचय पाकर संधि से उसके वैशिष्ट्य को समझ सकेगें।

7.3 रूप : संरचना और अवधारणा

भाषा की इकाई वाक्य है। वाक्य शब्दों से मिलकर बनते हैं और शब्द अक्षरों से। दूसरे शब्दों में वाक्य को शब्दों में खण्डित किया जा सकता है और शब्दों को अक्षरों में । आप जानते हैं कि एक या एक से अधिक अक्षरों से मिलकर बनी सार्थक ध्वनि ही 'शब्द' कहलाती है। रूप संरचना का सम्बंध शब्द से है। सामान्य बोलचाल में 'शब्द' और 'रूप' में अन्तर नहीं किया जाता किन्तु भाषा वैज्ञानिक दृष्टि में दोनों में पर्याप्त अन्तर है। शब्दों के दो रूप हैं - एक सामान्य या मूल रूप जो प्रायः शब्दकोश में मिलता है और दूसरा वाक्य में प्रयुक्त रूप। वाक्य में शब्द का प्रयुक्त रूप अन्य शब्दों के साथ सम्बंधतत्व से युक्त होता है। इस प्रकार वाक्य में प्रयोग के योग्य अर्थात अन्य शब्दों के साथ सम्बंधतत्व से युक्त शब्द ही 'रूप' (Morpheme) या 'पद' कहलाता है। आगे हम 'शब्द' और 'रूप' की संरचना पर विस्तार से चर्चा करेगें।

7.3.1 शब्द (Word) और रूप (Morpheme)

शब्द और रूप के सम्बंध में भारतीय मनीषियों ने पर्याप्त चिंतन किया है। प्राचीन व्याकरण ग्रंथों में शब्द या उसके मूल रूप को 'प्रतिपादिक' या 'प्रकृति' कहा गया है। जैसे - मोहन, नदी, कमल, पुस्तक आदि प्रतिपादिक शब्द हैं। जब हम इन शब्दों में सम्बंध स्थापन के लिए जोड़े जाने वाले तथ्यों के साथ वाक्य में प्रयोग करते हैं तो ये शब्द 'रूप' या 'पद' कहलाते हैं। संस्कृत में सम्बंध स्थापन के लिए जोड़े जाने वाले तथ्यों को 'प्रत्यय' कहा गया है। जैसे मोहन ने खाना खाया। यहाँ मोहन के साथ 'ने' प्रत्यय जुड़ने पर वह 'रूप' बन गया है। महाभाष्यकार पतंजलि ने लिखा है - 'नापि केवला प्रकृतिः प्रयोक्तव्या नापि केवल प्रत्ययः' अर्थात वाक्य में न तो केवल 'प्रकृति' का प्रयोग हो सकता है और न ही केवल प्रत्यय का। दोनों (प्रतिपादिक और प्रत्यय) मिलकर ही प्रयुक्त हो सकते हैं। दोनों के मिलने से जो बनता है वही 'रूप' या 'पद' है। पाणिनि के 'सुप्तिङन्तं पदं' (सुप और तिङ् जिनके अंत में हों, वहीं रूप या पद हैं।) वाक्य में 'रूप' की परिभाषा स्पष्ट है। जैसे - 'पढ़' प्रतिपादिक शब्द है। अब वाक्य में यदि इसे प्रयोग करना चाहें तो इसी रूप में इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता। इसमें कोई सम्बंधसूचक प्रत्यय जोड़ना पड़ेगा। जैसे 'पढ़ेगा', 'पढ़ता है' आदि। शुद्ध क्रिया शब्द 'पढ़' वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए सम्बंधतत्व से युक्त होकर 'पढ़ेगा', 'पढ़ता है' हो गया। यही 'शब्द' से 'रूप' बनने की प्रक्रिया है।

इस प्रकार 'शब्द' और 'रूप' के सम्बंध में कुछ मुख्य बातें स्पष्ट होती हैं -

- मूल या सामान्य शब्द को 'प्रतिपादिक' कहते हैं।
- वाक्य रचना में सम्बंधसूचक तत्व 'प्रत्यय' कहलाते हैं।
- वाक्य में केवल प्रतिपादिक शब्द का प्रयोग नहीं हो सकता। उसमें सम्बंधसूचक प्रत्ययों का प्रयोग आवश्यक है।
- वाक्य में सम्बंधसूचक प्रत्ययों से युक्त प्रतिपादिक शब्द ही 'रूप' कहलाता है।
- इस प्रकार 'शब्द' और 'रूप' में पर्याप्त अंतर स्पष्ट है।

कभी प्रतिपादिक शब्द और वाक्य में प्रयुक्त शब्द अर्थात 'रूप' में कोई रूपगत अन्तर नहीं दिखाई पड़ता है। इसका कारण है कि शब्दों में सम्बंध दिखाने के लिए किसी प्रत्यय आदि के जोड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती। शब्द के ही स्थान से ही अन्य शब्दों के साथ उसका सम्बंध स्पष्ट हो जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो ऐसी स्थिति में बिना प्रत्यय जोड़े किसी वाक्य में अपने विशिष्ट स्थान पर रखे जाने के कारण ही 'शब्द', 'रूप' या 'पद' बन जाता है। स्पष्ट है कि यहाँ सम्बंधसूचक प्रत्यय का महत्व न होकर 'स्थान विशेष' का महत्व हो जाता है। स्थान-प्रधान या अयोगात्मक भाषाओं में भी यही स्थिति है। वहाँ 'शब्द' और 'रूप' में कोई रूपगत अन्तर दिखाई नहीं पड़ता। हिन्दी में भी ऐसे उदाहरण देखें जा सकते हैं।

7.3.2 सम्बंधतत्व और अर्थतत्व

वाक्य में दो तत्व होते हैं - सम्बंधतत्व और अर्थतत्व। अर्थतत्व प्रत्येक शब्द में अन्तर्निहित होता है। जैसे एक वाक्य में कुछ शब्दों को लें - राम, रावण, बाण, मारना - इन शब्दों में अर्थतत्व निहित है किन्तु तो भी वाक्य में इन शब्दों को यदि इसी प्रकार रख दिया जाय तो वाक्य का कोई स्पष्ट अर्थ नहीं व्यक्त होगा। सम्बंधतत्व का कार्य है विभिन्न अर्थतत्वों का आपस में सम्बंध दिखलाना। ऊपर दिये गए शब्दों को इस रूप में देखें - राम ने रावण को बाण से मारा। इस वाक्य में वही चार अर्थतत्व हैं - राम, रावण, बाण, और मारना। साथ ही इसमें चार सम्बंध तत्व भी हैं - ने, को, से और मारना से बना मारा। 'ने' सम्बंध तत्व वाक्य में राम का सम्बंध दिखाता है। इसी प्रकार 'को' रावण से और 'से' बाण का सम्बंध दिखाता है। इस प्रकार वाक्य में प्रयुक्त शब्द सम्बंधतत्व से युक्त होने पर ही 'रूप' या 'पद' कहलाते हैं। अतः सम्बंधतत्व का मुख्य कार्य वाक्य में प्रयुक्त अर्थतत्वों में परस्पर सम्बद्धता प्रदान कर वाक्य को पूर्णरूप से अर्थवान बनाना है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सम्बंधतत्व भाषा की वह प्रक्रिया है जो अर्थतत्व (प्रतिपादिक/मूल शब्द) में पहले से निहित अर्थ को वाक्य के संदर्भ में पूर्ण रूप से प्रकाशित कर देती है। शब्द में अर्थ पहले से ही विद्यमान रहता है। आप जानते हैं कि शब्द सार्थक ध्वनियों का समूह है। भाषा में सार्थक शब्दों का ही अध्ययन होता है, निरर्थक शब्दों का नहीं। शब्द में अर्थ सदैव विद्यमान रहता है। इसीलिए शब्द को 'ब्रह्म' भी कहा गया हैं। शब्द में अर्थ की सत्ता होने के कारण ही उसे 'अर्थतत्व' कहा गया है। बिना अर्थ के शब्द की कल्पना भी नहीं की जा सकती। सम्बंधतत्व अर्थतत्व को व्याकरणिक अर्थ प्रदान करता है और अर्थतत्व को वाक्य के संदर्भ में प्रयोग के योग्य बनाता है। ऊपर दिये गए उदाहरणों से अर्थतत्व और सम्बंधतत्व के अन्तर्सम्बंध को भलि-भाँति समझा जा सकता है।

7.4 रूप-परिवर्तन (Morphological Change)

मोटे तौर पर रूप-परिवर्तन और ध्वनि-परिवर्तन में अन्तर स्पष्ट अन्तर नहीं दिखाई देता किन्तु वस्तुतः दोनों में पर्याप्त अन्तर है। ध्वनि-परिवर्तन भाषा की विशिष्ट ध्वनि में होता है और वह ऐसे सभी शब्दों को प्रभावित कर सकता है जिसमें वह विशिष्ट ध्वनि हो। रूप-परिवर्तन का

क्षेत्र ध्वनि-परिवर्तन की तुलना में सीमित है। वह किसी एक शब्द या पद को ही प्रभावित करता है। ध्वनि परिवर्तन होने पर पुरानी ध्वनि लुप्त हो जाती है और नई ध्वनि प्रचलित हो जाती है। इस तरह ध्वनि-परिवर्तन के पुराने रूप बहुत कम मिलते हैं क्योंकि नई ध्वनि आने पर उनका चलन समाप्त हो जाता है। रूप-परिवर्तन में ऐसा कम होता है। रूप-परिवर्तन होने के बाद भी नए रूपों के साथ पुराने रूप भी चलते रहते हैं। यही कारण है कि भाषा में एक अर्थ देने वाले अनेक रूप मिल जाते हैं।

7.4.1 रूप-परिवर्तन की दिशाएं

रूप-परिवर्तन निम्नलिखित दिशाओं में होता है -

1. अपवादित रूपों के स्थान पर नियमित रूप - किसी भी भाषा में नियमित रूपों के साथ ही अपवादित रूपों की संख्या होती है। जैसे संस्कृत में क्रिया व संज्ञा के रूपों में अपवाद बहुत अधिक थे। अपवादित रूपों के आधिक्य से उनके प्रयोग में भ्रम की गुंजाइश रहती है। साथ ही भाषा भी अधिक समय तक इन्हें वहन नहीं करती। फलतः भाषा के विकास में अपवाद रूप में प्राप्त रूपों का स्थान नियमित रूप ले लेते हैं। हिन्दी में परसर्गो का विकास इसी प्रक्रिया का परिणाम है।

2. नये रूपों की उत्पत्ति - भाषा के विकास में पुराने रूपों के चलन के साथ नये रूपों की उत्पत्ति भी होती रहती है। जैसे हिन्दी में चला, लिखा, पढ़ा, के सादृश्य पर 'करा' (किया) रूप भी प्रचलित हो गया। इसी तरह छठा-सातवाँ के सादृश्य पर 'छठवाँ' या 'छवाँ' रूप भी चलता है। नये रूपों की उत्पत्ति में सादृश्य और मानसिक प्रयत्न लाघव की भावना काम करती है। रूप-परिवर्तन की ये दिशाएं न तो बहुत स्पष्ट हैं और न ही एक दिशा में कार्य करती हैं। वे प्राचीन लुप्त रूपों को भी पुनः ग्रहण कर सकती हैं तो नये रूपों का निर्माण भी करती हैं।

7.4.2 रूप परिवर्तन के कारण

रूप-परिवर्तन के निम्नलिखित कारण हैं -

1. सरलता 2. एक रूप की प्रधानता 3. नवीनता 4. स्पष्टता 5. बल 6. अज्ञान 7. सादृश्य

1. **सरलता** - भाषा की प्रवृत्ति है कि वह कठिनता से सरलता की ओर विकसित होती है। संस्कृत से पालि, प्राकृत और अपभ्रंश से होते हुए आधुनिक हिन्दी के विकास में सरलता की प्रवृत्ति को स्पष्ट देखा जा सकता है। ध्वनि-परिवर्तन में प्रयत्न लाघव का जो स्थान है, रूप-परिवर्तन में सरलता का वही स्थान है। सरलता के लिए अनेक अपवादित रूप या तो लुप्त हो जाते हैं या वे नियमित रूप का स्थान ले लेते हैं। हिन्दी में कारक, वचन, लिंग के रूपों में अधिकता थी। इन्हें याद रखना कठिन था। सरलता की प्रवृत्ति ने इनकी संख्या कम कर दी।

2. **एक रूप की प्रधानता** - एक रूप की प्रधानता के कारण भी कभी-कभी रूप-परिवर्तन हो जाता है। जैसे सम्बंध कारक रूपों की प्रधानता का परिणाम यह हुआ कि बोलचाल में मेरे को, मेरे से, तेरे को, तेरे से जैसे रूप मुझे, मुझको, मुझसे आदि के स्थान पर चल पड़े।

3. **नवीनता** - नवीनता के प्रति मनुष्य का सहज आकर्षण और आग्रह रहता है। भाषा में भी यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। जैसे - 'मैं' की जगह बोलचाल में 'हम' का प्रयोग बढ़ रहा है। लड़कियाँ भी अब स्त्रीलिंग क्रियाओं की जगह पुल्लिंग क्रियाओं - पहनूँगा, पढ़ रहा हूँ, जाता हूँ जैसे रूपों का प्रयोग करने लगी हैं।

4. **स्पष्टता** - 'मैं' और हम में स्पष्टता लाने के लिए हम लोग, तुम लोग, का प्रयोग देखा जा सकता है। इसी तरह श्रेष्ठ की जगह सर्वश्रेष्ठ का प्रयोग भी होता है।

5. **बल** - किसी बात पर अधिक बल देने के लिए भी नये रूप प्रचलित हो जाते हैं। यद्यपि व्याकरणिक और अर्थ की दृष्टि से वे अशुद्ध होते हैं। जैसे अनेक के स्थान पर अनेकों रूप चल पड़ा। यहाँ बल देने का स्पष्ट उदाहरण है। इसी तरह फिजूल का अर्थ निरर्थक होता है किन्तु बल देने के लिए 'बेफिजूल' रूप चलने लगा जो अर्थ की दृष्टि से अशुद्ध है।

6. **अज्ञान** - अज्ञान के कारण भी नए रूप प्रचलित हो जाते हैं। अनेक से अनेकों या फिजूल से बेफिजूल के प्रचलित रूपों में अज्ञान भी एक कारण है। इसके अतिरिक्त सौन्दर्यता, कुटिलताई जैसे रूपों का प्रयोग केवल अज्ञान के कारण चलते हैं।

7. **सादृश्य** - सादृश्य के कारण भी नए रूप प्रचलन में आ जाते हैं। जैसे 'पाश्चात्य' के सादृश्य पर 'पौर्वात्य', दिया-लिया के सादृश्य पर 'किया' रूप चल पड़ा।

7.5 रूपिम (Morpheme) और संरूप (Allomorph)

रूप' या 'पद' के सम्बंध में आप पढ़ चुके हैं। ये वाक्य-संरचना के घटक हैं जिन्हें सामान्य भाषा में 'शब्द' कहते हैं। 'रूप' और 'शब्द' के अन्तर को भी आप भलीभाँति जान गये हैं। 'रूपिम' को भाषा विज्ञान में 'रूपतत्व', 'पदतत्व', 'पदिम' आदि नामों से जाना जाता है। रूपिम को समझने के लिए एक वाक्य का उदाहरण देखें - 'उसके पैतृक घर में पूजा होगी।' इस वाक्य में पाँच पद या रूप हैं -

उसके पैतृकघर में पूजा होगी।
1 2 3 4 5

आप देखेगें कि इन पाँच रूपों में सभी एक से नहीं हैं। कुछ इतने छोटे रूप हैं जिनके खण्ड नहीं किए जा सकते। जैसे 'मैं' अन्य रूपों को खण्डों में विभाजित किया जा सकता है। जैसे -

उस	के	पैतृक	घर	में	पूज	आ	हो	ग	ई
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10

यदि हम 'उस' को 'उ' और 'स' में अथवा 'घर' को 'घ' और 'र' में विभाजित करना चाहें तो ये खण्ड तो हो सकते हैं किन्तु ये खण्ड यहाँ निरर्थक हैं। रूपिम के लिए यह भी आवश्यक है कि उसके छोटे-छोटे खण्ड भी वाक्य संरचना में सार्थक हों। इस तरह ऊपर दिए गए वाक्य में दस रूपिम हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रूपिम भाषा उच्चारण की लघुतम इकाई है।

रूपिम की कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं -

'भाषा या वाक्य की सार्थक इकाई को रूपग्राम या रूपिम कहते हैं।' - **डॉ भोलानाथ तिवारी**

पाश्चात्य भाषा-विज्ञान में रूपिम को इस प्रकार परिभाषित किया गया है -

'A morpheme is the smallest meaningfull unit in a grammer of language.'

'In linguistics a morpheme is the smallest grammatical unit in a language.'

'A morpheme is a meaningfull lingustic unit, consisting of a word or word element that can not be divided into smaller meaningful parts.'

उक्त परिभाषाओं के आधार पर 'रूपिम' की निम्नलिखित विशेषताएं स्पष्ट होती हैं -

- रूपिम का सम्बंध भाषा व्याकरण से है।
- रूपिम लघुतम सार्थक इकाई है।
- रूपिम के सार्थक खण्ड किए जा सकते हैं।
- रूपिम शब्द या शब्द के तत्वों के रूप में होते हैं।

रचना और प्रयोग की दृष्टि से रूपिम के तीन भेद हैं -

(क) मुक्त रूपिम - ये केवल स्वतंत्र रूप में या अन्य वाक्य संरचना में भी प्रयोग में आ सकते हैं। जैसे ऊपर दिए गये वाक्य में पैतृक, घर स्वतंत्र रूपिम है। इनका अन्यत्र भी स्वतंत्र रूप में प्रयोग हो सकता है। जैसे (घर बन गया) या अन्य रूपिम के साथ भी इनका प्रयोग हो सकता है। (जैसे पैतृक सम्पत्ति)।

(ख) बद्ध रूपिम - इनका अलग या स्वतंत्र रूप से प्रयोग नहीं हो सकता। जैसे 'ता' (एकता, सुन्दरता) या 'ई' (लड़की, काली, खड़ी, पड़ी) आदि में।

(ग) बद्ध मुक्त - इस प्रकार के रूपिम कभी तो मुक्त रहते हैं (जैसे मोहन का) कभी बद्ध (जैसे तुमको, उनको) हिन्दी के परसर्ग (ने, को, में, से) इसी प्रकार के रूपिम हैं। वे संज्ञा के साथ तो मुक्त रूप में आते हैं किन्तु सर्वनाम के साथ बद्ध रहते हैं।

(घ) संयुक्त रूपिम - जब दो या अधिक रूपिम एक में मिलते हैं और उनका अर्थतत्व एक होता है तो उन्हें संयुक्त रूपिम कहते हैं। जैसे उसके, घरों आदि।

डॉ भोलानाथ तिवारी ने अर्थ और कार्य के आधार पर रूपिम के दो भेद किए हैं -

(क) अर्थदर्शी रूपिम - इनको अर्थतत्व भी कहते हैं। इनका स्पष्ट अर्थ होता है। ये भाषा के मूल आधार हैं। प्राचीन व्याकरण में इन्हें Stem, root या 'धातु' कहा गया है। व्याकरण की दृष्टि से ये रूपिम कई प्रकार के हो सकते हैं: जैसे क्रिया (हो, खा, पढ़, चल), संज्ञा (किताब, मोहन, गाय), सर्वनाम (मैं, तुम, वह), विशेषण (सुन्दर, अच्छ्, बड़) आदि।

ख) सम्बंधदर्शी रूपिम - इनमें अर्थ की प्रधानता नहीं होती। अन्य रूपिमों के साथ सम्बंध दर्शाना इनका प्रमुख कार्य होता है। इसलिए इन्हें सम्बंध तत्व भी कहा जाता है। यद्यपि इन्हें व्याकरणिक तत्व (कहना अधिक ठीक होगा। हिन्दी में परसर्ग, प्रत्यय आदि सम्बंधदर्शी रूपिम है। ये रूपिम एक शब्द का सम्बंध वाक्य के दूसरे शब्द से दिखाते हैं। साथ ही ये लिंग, वचन, पुरुष, काल, वृत्ति या भाव की दृष्टि से अर्थदर्शी रूपिम में परिवर्तन भी करते हैं। जैसे - 'अच्छ्'

अर्थदर्शी रूपिम है। इसमें आ, ई, इया, इयों, ए, ओं आदि सम्बंधदर्शी रूपिम या सम्बंध तत्वों को जोड़कर अच्छा, अच्छी, अच्छाइयाँ, अच्छाइयों, अच्छे, अच्छों आदि संयुक्त रूपिम बना सकते हैं।

संरूप (Allomorph) - प्रायः कई रूपिम एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, जिनका वितरण और प्रयोग की दृष्टि से सभी का स्थान अलग-अलग निधार्रित है अर्थात जहाँ एक का प्रयोग होता है, वहाँ दूसरे का नहीं और जहाँ दूसरे का प्रयोग होता है वहाँ तीसरे का नहीं। ऐसी स्थिति में वे सभी एक ही रूपिम के संरूप होते हैं। हिन्दी और अंग्रेजी में इसके उदाहरण देखे जा सकते हैं।

अंग्रेजी में संज्ञा रूपों का एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए 'स' (cats,books,hats), 'ज' (eyes,dogs,words), 'इज' (horses,roses), 'इन' (oxen), 'रिन' (children) तथा शून्य रूपिम (sheep) आदि का प्रयोग होता है। दूसरे शब्दों में स,ज,इज,इन,रिन तथा शून्य रूपिम बहुवचन बनाने वाले रूपिम हैं। इसी प्रकार हिन्दी में बहुवचन बनाने के लिए 'ओं' (घरों, पुस्तकों, घोड़ों, वस्तुओं आदि), 'ओ' (सम्बोधनवाची शब्दों जैसे-कवियो, सज्जनो, भाइयो, बहनो आदि), 'ए' (बेटे, लड़के, घोड़े आदि), 'एँ (माताएं, बहनें, वस्तुएं आदि), 'आँ' (बकरियाँ, दवाइयाँ, नदियाँ आदि), 'अँ' (चिड़ियाँ, गुड़ियाँ आदि), शून्य रूपिम (कवि, घर, साधु आदि) का प्रयोग होता है। इस तरह हिन्दी में ओं, ओ, ए, एँ, आँ, आदि बहुवचन वाले रूपिम हैं। हिन्दी और अंग्रेजी में बहुवचन बनाने वाले रूपिमों का अर्थ एक है। इसलिए ये सम्भावना हो सकती है कि ये अलग-अलग रूपिम न होकर एक ही रूपिम के संरूप हों। संरूपों के विश्लेषण के लिए हमें ये देखना पड़ता है कि (1). ये परस्पर विरोधी नहीं हैं अर्थात समानार्थी हैं। (2). ये परिपूरक वितरण में हों अर्थात सबके स्थान अलग-अलग निश्चित हों। एक ही स्थिति में एक से अधिक न आते हों। विश्लेषण में यदि ये स्थितियाँ होती हैं तो उन सबको एक रूपिम के संरूप माना जायेगा। उन्हीं संरूपों में किसी एक को जो अधिक प्रयुक्त हो, उसे रूपिम कहा जा सकता है। इस प्रकार अंग्रेजी में बहुवचन बनाने वाला रूपिम 'स' और अन्य 'ज, इज, इन, रिन' आदि संरूप हैं। हिन्दी में 'ओं' रूपिम है और 'ओ, ए, एँ, आँ, अँ' आदि संरूप हैं।

7.6 रूपिम के प्रकार्य

आप यह अच्छी तरह समझ गये हैं कि रूपिम एक महत्वपूर्ण व्याकरणिक संरचना है। वह भाषा की सार्थक इकाई होने के साथ ही वाक्य संरचना का आधार भी है। व्याकरणिक संरचना होने के कारण रूपिम के प्रकार्य को व्याकरणिक कोटियों के परिप्रेक्ष्य में ही देखना होगा। सम्बंधतत्व और अर्थतत्व के अन्तर्गत आप पढ़ चुके हैं कि सम्बंधतत्व द्वारा अर्थतत्व के काल, लिंग, वचन, पुरुष तथा कारक आदि का अभिव्यक्ति होती है। इन्हें ही व्याकरणिक कोटियाँ कहते हैं। सभी भाषाओं में इनकी कोटियाँ समान नहीं होती। जैसे संस्कृत में तीन लिंग और तीन वचन थे। हिन्दी में दो लिंग और दो वचन रह गए।

किसी प्रतिपादिक (मूल शब्द) में जिस व्याकरणिक कोटि (लिंग, वचन, काल आदि) के संयोजन में अलग से स्वनिम जोड़ना पड़े उसे विभक्तिपरक या रूपायित कोटि कहते हैं। इसके

विपरीत जहाँ प्रतिपादिक अपने अपरिवर्तित रूप में व्याकरणिक कोटि के सहित होते हैं, उसे चयनात्मक कोटि कहते हैं। इन्हीं दो कोटियों के साथ हिन्दी के रूपिम के प्रकार्यों का विवेचन इस प्रकार प्रस्तुत है। काल - काल के तीन भेद हैं - वर्तमान, भूत और भविष्य। क्रिया में विभिन्न प्रकार के सम्बंधतत्व जोड़कर एक ही काल को प्रकट किया जाता है। सम्बंधतत्व अनेक रूपों में कार्य करते हैं। कहीं तो स्वतंत्र शब्द जोड़कर तो कहीं क्रिया में जोड़कर भाव व्यक्त होता है। कहीं सम्बंधतत्व में इतना परिवर्तन हो जाता है कि अर्थतत्व और सम्बंधतत्व का पता ही नहीं चलता। जैसे - 'मैं जा रहा हूँ' वाक्य में 'रहा हूँ' स्वतंत्र शब्द है। 'मैं जाता हूँ' या 'मैं जाऊँगा' वाक्य में 'जा' मूल क्रिया में 'ता' और 'ऊँगा' जुड़कर काल को प्रदर्शित करते हैं। इसी प्रकार तीसरी स्थिति में 'मैं गया' वाक्य में 'जा' क्रिया 'गया' में पूरी तरह परिवर्तित हो गयी है। इस प्रकार सम्बंधतत्व की क्रिया के साथ संवृत होने से वाक्य को विभिन्न कालों का अर्थ प्रदान करती है। यह संवृतता की कालपरक रूपिम है।

लिंग - संज्ञा रूपों में लिंग रूपिम सक्रिय होते हैं। आप जानते हैं कि हिन्दी में दो तरह के लिंग हैं- पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। हिन्दी में संस्कृत के नपुसंकलिंग का प्रयोग नहीं होता। संज्ञा में लिंग का बोध करने के लिए दो उपाए अपनाए जाते हैं - प्रत्यय जोड़कर और स्वतंत्र शब्द में रखकर। जैसे 'ई' (लड़का, लड़की), 'इया' (बूढ़ा, बुढ़िया), 'इन' (बाघ, बाघिन) प्रत्यय पुल्लिंग से स्त्रीलिंग का बोध कराते हैं। इसी प्रकार स्वतंत्र रूप से शब्द साथ में रखकर भी लिंग बोध कराया जाता है जैसे माता-पिता, राजा-रानी, भाई-बहन, नर मछली, मादा मक्खी आदि। ये स्वतंत्र रूपिम हैं। लिंग के अनुसार संज्ञा विशेषण (सभी सर्वनाम, विशेषण नहीं) और क्रिया के रूप बदलते हैं। सभी सर्वनाम में लिंग के अनुसार परिवर्तन नहीं होता।

पुरुष - पुरुष रूपिम सर्वनाम के रूप परिवर्तन के कारक हैं। जिसका अनुसरण क्रिया करती है अर्थात पुरुष के कारण सर्वनाम के साथ ही क्रिया में भी परिवर्तन होता है। हिन्दी में पुरुष के तीन भेद हैं - उत्तम पुरुष (मैं, हम), मध्यम पुरुष (तू, तुम), अन्य पुरुष (वह, वे, आप)। उत्तम पुरुष में 'मैं' एक वचन में और 'हम' बहुवचन में रूपिम होगा।

वचन - हिन्दी में दो वचन हैं - एक वचन और बहुवचन। लिंग की तरह एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए प्रत्यय का और कभी-कभी समूहवाची स्वतंत्र शब्दों का प्रयोग किया जाता है जैसे -

लड़की + इयाँ - लड़कियाँ, विधायक + गण - विधायकगण।

कारक - कारक रूपिम का सम्बंध संज्ञा और सर्वनाम से होता है। वाक्य संरचना में कारक रूपिम कर्ता, क्रिया, कर्म को परस्पर सम्बद्ध करता है।

7.7 रूपिम निर्धारण पद्धति

आप ये जान चुके हैं कि रूपिम भाषा या वाक्य की लघुतम उच्चारित इकाई है। जब एक ही अर्थ में कई रूपिम प्रयुक्त होते हैं जिनका वितरण और प्रयोग की दृष्टि से अलग-अलग

स्थान निधार्रित होता है। ऐसी स्थिति में वे सभी एक ही रूपिम के संरूप होते हैं। रूपिम और संरूप के निर्धारण का सम्बंध उच्चारित भाषा से है। प्रायः भाषा का उच्चारण करते समय भाषा वैज्ञानिक उसकी भाषिक अभिव्यक्ति को स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाते जिससे उस भाषा के रूपिम का तुरंत निर्धारण नहीं हो पाता। धाराप्रवाह भाषिक अभिव्यक्ति में यह स्थिति और कठिन हो जाती है। ऐसी स्थिति में भाषा वैज्ञानिक को वक्ता से अपने कथन को धीरे-धीरे उच्चारित करने के लिए कहना चाहिए। धीरे-धीरे कथन के उच्चारण में वक्ता वाक्य में आवश्यकतानुसार स्वाभाविक रूप से विराम देगा। दो विरामों के मध्य के अंश रूपिम होंगे । वे संयुक्त भी हो सकते हैं और अकेले भी। वाक्य के इन स्वाभाविक टुकड़ों का दो आधारों पर परीक्षण किया जाता है -

1. क्या वह अंश अन्य उच्चारणों में लगभग उसी अर्थ में प्रयुक्त होता है। यदि इसका उत्तर 'नहीं' है, तो निश्चित रूप से चुना हुआ अंश हमारे काम का नहीं है। अब हम दूसरे अंश के साथ यही परीक्षण करेगें। यदि उत्तर 'हाँ' में मिलता है तो यह लगभग एक व्याकरणिक रूप है किन्तु अनिवार्यतः रूपिम नहीं है।

2. क्या वह 'रूप' अन्य छोटे रूपों में विभक्त हो सकता है, और क्या छोटे रूप लगभग उसी अर्थ में अन्य उच्चारण में व्यवहृत होते हैं ? क्या छोटे रूपों का अर्थ समग्र रूप में उस बड़े रूप के अर्थ को अभिव्यक्त करता है ? यदि उत्तर 'हाँ' में है तो यह रूप एक रूपिम से बड़ा है। अर्थात संयुक्त रूप है और फिर हम हर टुकड़ों का उपर्युक्त दो आधारों पर परीक्षण करेगें। यदि उत्तर 'नहीं' में मिलता है तो वह रूप एवं रूपिम है। तात्पर्य ये है कि प्रत्येक चुना हुआ प्रथम परीक्षण के आधार पर या तो अनावश्यक अंश हो सकता है या व्याकरणात्मक रूप हो सकता है या एक रूपिम। इस प्रक्रिया द्वारा हम उच्चारणों के सभी रूपिमों की खोज कर सकते हैं।

निम्नलिखित उच्चारित कथन की उपर्युक्त दोनों आधारों पर परीक्षा से बात स्पष्ट हो जायेगी-

'वह अपने बड़े भाई के साथ अच्छा व्यवहार करता है।' धीरे-धीरे उच्चारित किये जाने पर इसके स्वाभाविक टुकड़े होगें - /वह/, /अपने/, /बड़े/, /भाई/, /के/, /साथ/, /अच्छा/, /व्यवहार/, /करता/, है।

प्रस्तुत वाक्य में सहायक रूपिमों की खोज के लिए हम किसी अंश को लेकर उपर्युक्त प्रश्नों के आधार पर उस अंश की परीक्षा करेगें -

/वह/

(1) वह जाता है/

/ वह पढ़ती है।/

/ वह खेलता है।/

स्पष्ट है कि /वह/ अन्य उच्चारणों में भी उसी रूप में और अर्थ में प्रयुक्त होता है। चुने उच्चारणों के /वह/ एवं इन उच्चारणों के /वह/ अर्थ में समानता है। यह हिन्दी का सर्वनाम रूप है जो अन्य पुरुष में स्त्रीलिंग तथा पुल्लिंग दोनों में प्रयुक्त होता है। यही इसका अर्थ है।

/वह/ के सम्भावित टुकड़े हो सकते हैं -

/व/, /ह/

/वहाँ/, /वह/, /रह/, /वापस/ में टुकड़े व्यवहृत तो होते हैं परन्तु उसी अर्थ में नहीं यहाँ वह के /व्/, या /ह/ टुकड़ों में उपयुक्त अर्थ द्योतित नहीं है। अपितु ये दूसरे अर्थ के जनक हैं। अस्तु ये निरर्थक हैं। निष्कर्षतः /वह/ के और सार्थक टुकड़े नहीं किये जा सकते, इसलिए /वह/ एक रूपिम है।

(2) /अपने/

/मैं अपने घर जा रहा हूँ/

/वह अपने गुरूजनों का सम्मान करता है/

/वह अपने पिता के साथ भोजन कर रहा है/

इन उच्चारणों में /अपने/ लगभग उसी अर्थ में प्रयुक्त है। अतः यह एक रूपिम है।

/अपने/ के निम्नलिखित टुकड़े किये जा सकते हैं -

(क) /आ/, /ने/

(ख) /अ/, /पन/

(ग) /अपन/, /ए/

प्रथम दोनों टुकड़े यद्यपि हिन्दी में अन्य उच्चारणों में प्रयक्त होते हैं किन्तु उपर्युक्त अर्थ में नहीं। अतः ये दानों टुकड़े हमारे काम के नहीं। (ग) टुकड़ा समान अर्थों में हिन्दी भाषा के अन्य उच्चारणों में भी प्रयुक्त होता है। /ए/ पुल्लिंग बहुवचन बोधक प्रत्यय के रूप में /अपने/और/बड़े/में प्रयुक्त हैं/ अतः अपने संयुक्त रूपिम है - /अपन/+/-ए/ एवं संरूप

सर्वथा भिन्न अर्थवाची समध्वन्यात्मक रूप दो भिन्न 'रूपिम' माने जाते हैं। यथा हिन्दी का /कनक/ दो रूपिम है। एक का अर्थ 'स्वर्ण' है, दूसरे का धतूरा।

ऐसे समन्वयात्मक रूप जो अनेकार्थी हैं तथा उनके अर्थ संदर्भों से स्पष्ट हो जाएँ तो वे एक ही रूपिम के संरूप होंगे। यथा 'मुझे मार', तथा 'मुझे मार पड़ी' में 'मार' शब्द क्रमशः क्रिया और संज्ञा हैं तथा संदर्भगत स्पष्टता है। किन्तु उसके विपरीत वे रूप जो अनेकार्थी है पर संदर्भरहित है अलग रूपिम होगें। यथा - ऊपर का उदाहरण - 'कनक'/'कनक अच्छा नहीं होता।' इस कथन में संदर्भगत स्पष्टता नहीं है अतः अलग रूपिम होगा।

7.8 रूप स्वनिम विज्ञान (Morphophnemics)

रूप स्वनिम विज्ञान अथवा रूप ध्वनिग्राम विज्ञान रूप विज्ञान की ही एक विशेष शाखा है जिसमें उस ध्वन्यात्मक परिवर्तनों का अध्ययन किया जाता है जो दो या दो से अधिक रूपों या रूपग्रामों के मिलने पर दिखाई पड़ते हैं। रूपग्राम के परिवर्तन वाक्य, रूप या शब्द के स्तर पर दो या दो से अधिक रूपग्रामों के एक साथ आने पर सम्भव होते हैं। उदाहरण के लिए जगत + जननी में त का ज होने से जगज्जननी हो जाता है। यहाँ परवर्ती घोष ध्वनि के कारण यह परिवर्तन हुआ है। इस प्रकार के परिवर्तन का अध्ययन रूव स्वनिम विज्ञान या रूप ध्वनिग्राम में होता है।

कुछ विद्वानों ने रूप स्वनिम विज्ञान को 'संधि' के निकट माना हैं किन्तु प्रसिद्ध भाषाविद् भोलानाथ तिवारी इससे सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार, 'वस्तुतः संधि में प्रायः केवल उन परिवर्तनों को लिया जाता है जो दो मिलने वाले शब्दों या रूपों में एक के अन्त्य या दूसरे के आरम्भ या दोनों में घटित होते हैं।' जैसे -

राम + अवतार = रामावतार ध्वनि + अंग = ध्वन्यंग

उत् + गम = उद्गम तेज + राशि = तेजोराशि

लेकिन रूप ध्वनिग्राम विज्ञान में इसके साथ-साथ अन्य स्थानों पर आने वाले परिवर्तन भी लिये जाते हैं। जैसे -

घोड़ा + दौड़ = घुड़दौड़ ठाकुर + आई = ठकुराई

बूढ़ा + औती = बूढ़ौती

इन उदाहरणों में हम देखते हैं कि हर दो शब्द के बीच में तो परिवर्तन हुए ही हैं, साथ ही अन्य स्थानों में भी (घो झ घु, ठा झ ठ, बू झ बु) परिवर्तन हो गए हैं। इन सारे परिवर्तनों का अध्ययन रूप ध्वनिग्राम विज्ञान में होता है। इस प्रकार यह संधि से अधिक व्यापक है।

रूप ध्वनिग्रामीय परिवर्तन मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं -

(क) स्थान की दृष्टि से (ख) रूप की दृष्टि से

स्थान की दृष्टि से रूप ध्वनिग्रामीय परिवर्तन के भी दो भेद हैं - बाह्य और अभ्यंतर। बाह्य परिवर्तन में शब्द के आदि या अंत में अर्थात उनके बाहरी अंग में परिवर्तन होता है। जैसे राम + अवतार = रामावतार। यहाँ 'राम' के 'म' में परिवर्तन है। इसी प्रकार ध्वनि + अंग = ध्वन्यंग में 'नि' और 'अ' में परिवर्तन है। अभ्यंतर परिवर्तन में संधि-स्थल से अलग शब्द के भीतर परिवर्तन होता है, जैसे घुड़दौड़, बुढ़ौती, ठकुराई आदि शब्दों में आप देख चुके हैं। रूप की दृष्टि से समीकरण प्रमुख रूप ध्वनिग्रामीय परिवर्तन हैं। जैसे डाक + घर = डाग्घर में 'ग' के घोषत्व के कारण 'क' भी घोष अर्थात 'ग' हो गया है। इसी प्रकार नाग + पुर = नाक्पुर में 'प' के अघोषत्व के कारण 'ग' भी अघोष अर्थात 'क' हो गया है।

7.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने रूप की संरचना और अवधारणा के अन्तर्गत यह जाना कि रूप की संरचना का सम्बंध शब्द से है। सामान्य रूप से शब्द और रूप में कोई अन्तर नहीं दिखाई पड़ता किन्तु भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से वाक्य में प्रयोग के योग्य (अर्थात अन्य शब्दों के साथ सम्बंधतत्व से युक्त) शब्द ही रूप या पद कहलाता है। प्राचीन भारतीय व्याकरणों ने शब्द के मूल रूप को (अर्थात अन्य शब्द के साथ सम्बंध तत्व के बिना) प्रतिपादिक या प्रकृति कहा है। यही प्रतिपादिक या प्रकृति शब्द प्रत्यय से युक्त होने पर 'रूप' बन जाता है। शब्द और रूप में यही मूल अन्तर है। आप इस तथ्य से भली-भाँति अवगत हो गये होगें कि वाक्य में दो तत्व होते हैं - सम्बंधतत्व और अर्थतत्व। सम्बंधतत्व ही वाक्य को पूर्ण अर्थवान बनाता है। यद्यपि प्रत्येक शब्द में अर्थ पहले से ही विद्यमान होता है किन्तु सम्बंधतत्व के बिना वाक्य का अर्थ रूपष्ट नहीं

हो सकता। दोनों का परस्पर सम्बंध है। रूप-परिवर्तन के विस्तार से अध्ययन के बाद आप रूप-परिवर्तन के स्वरूप के साथ ही उसके कारण और दिशाओं के बारे में अच्छी तरह अवगत हो गये होगें। इसी क्रम में आप रूपिम और संरूप से परिचित हुए। जैसा कि आप जानते हैं कि रूपिम भाषा उच्चारण की लघुतम इकाई है। इसका सम्बंध भाषा व्याकरण से है और इसके सार्थक खण्ड किये जा सकते हैं। रूपिम और संरूप के विस्तृत अध्ययन के बाद आपने रूपिम के प्रकार्य के अन्तर्गत काल, लिंग, पुरुष, वचन, कारक आदि रूपिम के बारे में जाना। साथ ही रूपिम निर्धारण पद्धति के बारे में भी सूक्ष्म अध्ययन किया। रूप स्वनिम विज्ञान रूपविज्ञान की ही एक शाखा है। इसे रूप ध्वनिग्राम विज्ञान के नाम से भी जाना जाता है। इसके बारे में भी आपने सामान्य जानकारी प्राप्त कर ली है।

इस तरह रूप विज्ञान के विविध आयामों के बारे में विस्तृत अध्ययन के बाद आप रूप विज्ञान की स्पष्ट अवधारणा समझने और समझाने में सक्षम हो गये होगें साथ ही रूप विज्ञान के भाषा व्याकरणिक अन्तर्सबन्ध को स्पष्ट करने में समर्थ होगें।

7.10 पारिभाषिक शब्दावली

प्रतिपादिक	-	मूल शब्द
प्रत्यय	-	सम्बंध स्थापन के लिए शब्द में जोड़े जाने वाले तत्व
रूप	-	सम्बंधतत्व से युक्त शब्द
पद	-	उपरिवत
सम्बंधतत्व	-	अन्य शब्दों के साथ सम्बंध को व्यक्त करने वाला तत्व
सादृश्य	-	समानता
अपवादित	-	जो सामान्य रूप से प्रचलित न हो
रूपिम	-	भाषा उच्चारण की लघुतम इकाई
स्वन	-	ध्वनि
स्वनिम	-	ध्वनिग्राम
परिपूरक	-	किसी के साथ जुड़कर उसे पूरा करने वाला
बद्धरूपिम	-	वह रूपिम जो सदा अन्य रूपिमों के साथ प्रयोग में आता हो
मुक्त रूपिम	-	जो रूपिम एकाकी प्रयोग में आता हो
रूपस्वनिम विज्ञान	-	दो या दो से अधिक रूपों या रूपिमों से बने शब्दों के

		रचनात्मक परिवर्तन का अध्ययन, विश्लेषण करने वाला विज्ञान
वृत्ति	-	क्रिया के निश्चिततार्थ, संकेतार्थ, सम्भावनार्थ, आज्ञार्थ, संदेहार्थ का बोध कराती है
प्रतिपाद्य	-	मूल विषय

7.11 अभ्यास प्रश्न एवं उत्तर

लघु उत्तरी प्रश्न -

1. शब्द और रूप में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
2. रूप परिवर्तन के किन्हीं दो कारणों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
3. रूप परिवर्तन और ध्वनि परिवर्तन में अंतर बताइए।
4. संरूप को स्पष्ट कीजिए।
5. रचना और प्रयोग की दृष्टि से रूपिम के भेद बताइए।
6. रूप परिवर्तन की दिशाएं स्पष्ट कीजिए।
7. काल और लिंग रूपिम का परिचय दीजिए।
8. रूप स्वनिम विज्ञान पर टिप्पणी लिखिए।
9. रूप स्वनिम विज्ञान और संधि में अंतर बताइए।
10. अर्थदर्शी और सम्बंधदर्शी रूपिम क्या है ?

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. वाक्य में प्रयुक्त शब्द ..... से युक्त होता है।
2. शब्द के मूल रूप को ..... कहते हैं।
3. शब्द में सम्बंध सूचक जोड़े जाने वाले तत्व ..... कहलाते हैं।
4. पुरुष रूपिम ..... के रूप परिवर्तन के कारक हैं।
5. ..... क्रिया के निश्चयार्थ, आज्ञार्थ, आदि के संकेतक हैं।
6. लिंग रूपिम का सम्बंध ..... रूपों से है।
7. रूप परिवर्तन का क्षेत्र ध्वनि परिवर्तन की अपेक्षा ..... होता है।
8. स्वनिमों के सभी अनुक्रम ..... नहीं होते।
9. रूपिम ..... के अनुक्रम होते हैं।
10. सम्बंध तत्व वे ..... होते हैं जो काल, लिंग, वचन आदि का संकेत करते हैं।

सही/गलत पर निशान लगाइए -

1. रूप संरचना का सम्बंध वाक्य से है।
2. वाक्य प्रकृति और प्रत्यय दानों के प्रयोग से ही सार्थक होता है।
3. रूपिम भाषा उच्चारण की लघुतम अर्थवान इकाई है।
4. गाय, पशु, पक्षी, मुक्त रूपिम के उदाहरण है।
5. लड़की बद्ध रूपिम नहीं है।
6. सदैव अन्य रूपिमों के साथ प्रयुक्त होने वाला संयुक्त रूपिम है।
7. प्रतिपादिक शब्द ही रूप है।
8. सर्वथा भिन्नार्थक सम ध्वन्यात्मक रूप दो भिन्न रूपिम होते हैं।
9. रूपिम ध्वनियों के अनुक्रम होते हैं।
10. शब्द और रूप एक ही इकाई हैं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

1. निम्नलिखित में कौन मुक्त रूपिम नहीं है।

(अ) मोहन (ब) गाय (स) घरों (द) नगर

2. 'राजपुरुष' किस प्रकार का रूपिम है ?

(अ) मुक्त (ब) मुक्तबद्ध (स) बद्ध (द) संयुक्त

3. 'मैं' के साथ पर 'हम' रूप का प्रचलन किस कारण से है ?

(अ) नवीनता का आग्रह (ब) सादृश्य (स) एकरूपता की प्रधानता (द) अज्ञान

4. अर्थदर्शी रूपिम में कौन नहीं आते ?

(अ) क्रिया (ब) संज्ञा (स) सर्वनाम (द) लिंग

5. 'मैं जाऊँगा' वाक्य में 'जाऊँगा' में किस प्रकार का सम्बंधसूचक रूपिम है ?

(अ) पुरुष (ब) काल (स) लिंग (द) कारक

उत्तर

रिक्त स्थानों की पूर्ति -

1. प्रत्यय 2. प्रतिपादिक 3. प्रत्यय 4. सर्वनामों 5. वृत्ति
6. संज्ञा 7. सीमित 8. रूपिम 9. ध्वनियों 10. प्रत्यय

सही/गलत वाक्य -

1. गलत 2. सही 3. सही 4. सही 5. गलत 6. गलत 7. गलत 8. सही
9. सही 10. गलत

वस्तुनिष्ठ प्रश्न -

1. (स) 2. (ब) 3. (अ) 4. (द) 5. (ब)

7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान, किताब महल, पटना
2. डॉ उदय नारायण तिवारी, अभिनव भाषा विज्ञान, किताब महल, इलाहाबाद
3. डॉ राजमणि शमा,आधुनिक भाषा विज्ञान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

7.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. रूप की अवधारणा स्पष्ट करते हुए शब्द से उसका अंतर बताइए तथा अर्थतत्व और सम्बंधतत्व को सोदाहररण स्पष्ट कीजिए।
2. रूप परिवर्तन के कारण और दिशाएं बताते हुए रूपिम के प्रकार्य पर प्रकाश डालिए।